... the vehicle bearing regis-tration No. DL6CD/3592, having white colour, was parked outside his residence 578/B Shiv Nagar. It was found stolen in the morning. Some documents and PDD bills of the public were also lying in the car. A report was lodged with the concerned Bakshi Nagar police station.

... ed S Gulbeer Singh as president, S Amarjeet Singh Soodan as senior vice president, S Jeet Singh as vice president. S Pritam Singh as general secretary, Vinod Kumar as joint secretary, S Jasbir Singh as secretary Finance and Subash Shastri as joint secretary finance.

CM condoles demise of Dr Mukhtar

Excelsior Correspondent

JAMMU, Jan 18: Chief Minister, Omar Abdullah has condoled the demise of Dr. Mukhtar Ahmed Wani, Joint Secretary General, Kashmir Chamber of Commerce and Industries.

In a condolence message, the Chief Minister has conveyed his sympathies with the bereaved family and prayed for the peace to the departed soul.

Excelsior Corres...

JAMMU, Jan 1...: ... communities are celeb... annual and bi-annual ... tions on January 20 a... religious fervour and ent... their respective places o...

The annual congr... Mukhyal Brahmin B... going to be held ... Panchami falling on Ja... Bua Sajawan Devsth... (near Akhnoor). The co... will start at 9 a m with P... Mandir and conclu... Biradari meeting ... Bhandara (community ...

The bi-annual co... of Akhil Bhartiya ... Mahajan Biradari is b... on January 20 at Dev...

JAMMU AND KASHMIR PUBLIC SERVICE COMMISSION

PRAGATI BHAVAN, RAIL HEAD COMPLEX, JAMMU.

(www.jkpsc.org)

Notice

Dated: 17-01-2010

It is notified for the information of all the concerned candidates that on the basis of the result of the Screening T... 15-11-2009 for the posts of Lecturer 10+2 Sociology in School Education Department advertised vide Notification Nos. ... 2008 dated 23-05-2008 and 07-PSC of 2009 dated 09-03-2009 the Notification/ Category wise Provisional Cut off me... listing the candidates to be called for interview, has emerged as under :-

Notification		OM	RBA	SC	ST	ALC	SLC	PHC
05-PSC OF 2008 Dated 23-05-2008	No. of posts	5	2	1	1	-	-	-
	Cut off marks	89.4315	87.4576	81.3559	83.3898	-	-	-
07-PSC OF 2009 Dated 09-03-2009	No. of posts	9	3	1	1	1	-	-
	Cut off marks	88.4746	87.4576	81.3559	86.4407	80.339	-	-

The result of the Screening Test has been declared by the Commission vide Notification No. PSC/E... dated 15-12-2009. All the candidates who fall under the above cut off criteria may keep their documents ready as interv... posts are to be held w.e.f. 06-03-2010.

Note (Repeat) : *The cut off marks in respect of all the categories is purely provisional and subject to v... of documents submitted by the candidate. Correction/Change, if any, shall be notified ...*

(M. A. Bukhari), IAS
Secretary
J&K Public Service Commission
Jammu.

No:- PSC/DR/Sociology/10+2/2009

Date:- 17-01-2010

JAMMU AND KASHMIR
PUBLIC SERVICE COMMISSION
PRAGATI BHAWAN, RAIL HEAD COMPLEX JAMMU
(www.jkpsc.org)

JAMMU AND KASHMIR ...

of Kul Devi, Kalbeer Ji and Maldevi. The devotees have been asked to participate and get invoked blessings of the deities for well being of their own self and also of their wards.

Meanwhile Sthapna Divas of Chogga Mahajan Biradari is being held on January 24 at Kul Datti's temple at Baba Da Jhaar (Talab) Akhnoor Road Jammu. Devotees of Kul-Datti Maa 'Dhaayani Mangla Devi Ji' have been asked to get invoked blessings of Kul Datti. Pooja and Havan will start at 10 a m and later in the afternoon Preeti Bhoj would be served from 1 p m onwards.

Another Doda road mishap injured succumbs

Excelsior Correspondent

JAMMU, Jan 18: Another injured of Pul Doda-Bhaderwah road accident succumbed to his injuries at Government Medical College and Hospital today taking the overall death toll to seven.

According to reports, Rafiq Ahmed Sheikh of Kotli Bhaderwah failed to respond to the treatment and breathed his last at GMC. He was the seventh victim of that accident, as six persons were killed on January 15 when the mishap took place.

Meanwhile, a housewife namely Ram Kali, wife of Hem Raj of Lower Roop Nagar was referred to GMC, Jammu after she had allegedly attempted to suicide at home.

गद्य संकलनम् कुञ्जी

बी॰ ए॰ द्वितीय वर्ष के लिए

लेखिका

सुमन बाला गुप्ता

एम॰ ए॰ (संस्कृत), बी॰ एड॰

1998 & ONWARDS

Narendera Publishing House

Jalandhar.

Price : Rs. 12.00

विषय-सूची

प्रथम खण्ड

द्वितीय खण्ड

तृतीय खण्ड

चतुर्थ खण्ड

पञ्चम खण्ड

प्रथम खण्ड

प्रथम पाठ

(क) आचार्यानुशासनम्

कठिन शब्द तथा उनके अर्थ

शब्द: अर्थ:

(1) अनूच्य = पढ़ाकर

(2) प्रमद = आलस्य

(3) सुचरितानि = अच्छे कार्य

(4) श्रद्धया = निष्ठा से

(5) ह्रिया = लज्जा से

(6) कर्मविचिकित्सा = कार्य करने में संशय

(7) आयुक्ताः = ऊंचे कामों में लगे हुए ।

(8) उपास्यम् = करने योग्य

(9) वर्तेरन् = व्यवहार करें

प्रस्तुत पाठ का हिन्दी में अनुवाद—

वेद को पढ़ कर आचार्य अपने शिष्यों को (ब्रह्मचारियों को) इस प्रकार उपदेश करते थे या देते थे ।

सत्य बोलो, धर्म का आचरण करो । स्वाध्याय से प्रमाद मत करो । आचार्य के लिए गुरु दक्षिणा लाकर दो । सन्तान सूत्र अर्थात् वंश परम्परा को न तोड़ो । सत्य से आलस्य न करो । स्वाध्याय और प्रवचन से आलस्य न करो । देव और पितृ कार्यों में आलस्य मत करो । माता को देवी मानने वाले बनो । पिता को देव मानने वाले बनो । आचार्य को देव मानने वाले बनो । अतिथि को देव मानने वाले बनो । जो भी

प्रशंसनीय कार्य हैं वे ही करो। अन्य दूसरे नहीं। जो हमारे लिए अच्छे चरित्र हैं, उनका आचरण करो। जो हमारे पूज्य (श्रेष्ठ) ब्राह्मण हैं उनको आसन देकर सम्मान करो। श्रद्धा से दो, अश्रद्धा से न दो, शान से दो, लज्जा से दो डर से दो, सोच-समझकर दो। यदि तुम्हें कार्य करने में तथा आचरण के सम्बन्ध में सन्देह (शंका) हो तो जो ब्राह्मण विद्वान्, चतुर एवं अनुभवी ऊँचे कार्य में लगे हुए, स्निग्ध स्वभाव वाले, धर्म की इच्छा वाले हों जिस प्रकार के वे व्यवहार करें उसी प्रकार से व्यवहार करो। यही आज्ञा है। यही उपदेश है यही वेदों का तत्त्व ज्ञान है, यही अनुशासन है। इसी प्रकार की उपासना करनी चाहिए। यही उपासना के योग्य है।

(तैत्तरीयोपनिषत् शिक्षा-वल्याम्—11)

(ख) आत्मोन्नत्यै जपः

हिन्दी में अनुवाद—

आत्मा की उन्नति के लिए जप करो।

असत्य से सत्य की ओर चलो।

अन्धकार से प्रकाश की ओर चलो।

मृत्यु से अमृत की ओर चलो।

(बृहदारण्यकोनिषत्)

द्वितीय पाठ

सुदर्शनं तडाकम्

कठिन शब्दों के अर्थ

(1) **सिद्धम्**= सिद्धि हो।

(2) **सुश्लिष्टबन्धं** = अच्छी तरह बंधे हुए।

(3) **त्रिस्कन्धं**= तीन भागों में विभक्त।

(4) **सुगृहीतनाम्नः** = जिसका नाम लेना शुभ है।

(5) गिरेरुर्जयत: = पर्वत से नकलने वाली ।

(6) सर्ववर्णै: = सभी जाति के लोगों से (द्वारा) ।

(7) आप्राणोच्छ्वासात् = आजीवन ।

(8) संग्रामेषु = युद्धों में ।

हिन्दी में अनुवाद—

यह सुदर्शन तालाब गिरि नगर से दूर, मिट्टी एवं पाषाणों की चौड़ाई, लम्बाई, ऊँचाई से बिना जोड़ की बंधी मजबूत बांध पंक्तियों के कारण पर्वतपाद की स्पर्धा करने वाला, अच्छी तरह से बन्धे हुए, बने हुए, अकृत्रिम बांध से युक्त अच्छी प्रकार से बनी नाली, बढ़े हुए जल को निकालने के लिए बड़े नाले तथा गन्दगी से बचाने के उपाय से युक्त तीन भागों में विभक्त समुचित व्यवस्थाओं से अच्छी दशाओं में है।

यह राजा महाक्षत्रप, जिस का नाम ही लेना शुभ है, स्वामिचष्टन का(पौत्र का) (राजा क्षत्रप का नाम लेना शुभ स्वामिजयदाम्न के पुत्र का) राजा महाक्षत्रप जो श्रेष्ठ लोगों द्वारा प्रशंसनीय है। रुद्रदाम्न नामक शक संवत् 72 में मार्गशीर्ष महीना बहुत प्रतिपदा में बहुत बारिश होने से समुद्र की तरह पृथ्वी पर ऊर्जयत् पर्वत से निकलने वाली पलाशिनी नाम वाली सुवर्ण सिकता नदी बहुत तेज़ बाढ़ आने से पुल को बचाने के लिए अनेक उपाय करने पर भी पर्वत की चोटियों, वृक्षों, तटों, अटारियों, मकानों के ऊपरी तल्लों, दरवाज़ों और बचाव के लिए बनाए गए ऊँचे-ऊँचे स्थानों को नष्ट कर देने वाले प्रलयकालीन, प्रलय करने वाली प्रचण्ड वेग वाली वायु से विलोड़ित, जल के विक्षेप से जर्जरीभूत अंगों वाले, पत्थरों वृक्षों, झाड़ियों और लताओं के फैंके जाने से (वह सुदर्शन नाम वाली झील) नदी की निचली सतह तक उखड़ गई। चार सौ बीस हाथ लम्बी, चार सौ बीस हाथ चौड़ी और पचहत्तर हाथ गहरी दरार पड़ने से सारा (झील का) पानी बह गया और झील सूखी धरती की तरह दुर्दर्शन हो गई।

लोगों के कल्याण हेतु मौर्य राजा चन्द्रगुप्त ने सुदर्शन नाम की झील का निर्माण करवाया। मौर्य अशोक के लिये यवन राज तुषास्फ ने वहाँ

ई नहरें निकलवाई। राजोचित सुरक्षा व्यवस्था से परिपूर्ण उसकी दृष्टि से बिस्तृत पुल के जन्म से ही अबाध रूप से ही प्राप्त राजलक्ष्मी के धारणात्मक गुणों के कारण सभी जातियों के लोगों ने रक्षा के लिये संकल्प लिया। जिसने युद्धों तथा अन्य स्थानों पर मनुष्य-हिंसा नहीं करने की दृढ़ प्रतिज्ञा की थी। सामने उपस्थित बराबर के शत्रुओं को अपने बाणों का लक्ष्य बनाता था और दुर्बल शत्रुओं की दया का पात्र बनाता था।

अपने आप उपस्थित अवनत जनसमूह को जो दीर्घ जीवन और अभय देता था। चोर, डाकू, हिंसक जन्तु आदि जंगली जानवर और रोगादि से सदा अनाक्रान्त रहने वाले जन समुदाय से युक्त स्थानीय स्वशासन से युक्त (सम्पन्न) नगरों वाले अपने पराक्रम से उपलब्ध राज्य के प्रति निष्ठावान् मन्त्रियों वाले पूर्वी मालव, पश्चिमी मालव, अनूप जनपद, उत्तरी काठियावाड़, दक्षिणी काठियावाड़ साबरमती नदी के समीपवर्ती प्रदेश मारवाड़, कच्छ, पश्चिमी सिन्ध, पूर्वी सिन्ध, दक्षिणी काठियावाड़, उत्तरी कोंकण के बीच का प्रदेश, उत्तरी कोंकण, पश्चिमी विन्ध्य और अरावली पहाड़ी भूमि इत्यादि प्रान्तों का जो राजा था, सब पर उसका प्रभाव था। सन्तुलित रूप से धर्म, अर्थ और कामादि त्रिवर्गों का सम्पादन करने वाले सभी क्षत्रियों में विख्यात "वीर" शब्द से उत्पन्न अभिमान के कारण स्वतन्त्र हो कर रहने वाले योद्धाओं को बलपूर्वक उखाड़ दिया था। दक्षिण पथ के स्वामी सातकर्ण को भी दो बार जीत कर निकटतम सम्बन्ध के कारण छोड़ देने से जिस ने कीर्ति को पाया था। जिसने विजय को प्राप्त किया। राजच्युत (राज्य से भ्रष्ट राजाओं को जिसने फिर से प्रतिष्ठित कर दिया। न्याय के आसन से हाथ उठाकर समुचित निर्णय देते रहने के कारण जिसने धर्म के प्रति अपने महान् अनुराग का उपार्जन किया। व्याकरण, राजनीति, संगीत एवं तर्क आदि विद्याओं से सुशोभित, शास्त्रों के अध्ययन, स्मरण सम्यक् अनुमति और व्यवहार से जिसने प्रभूत यश को प्राप्त किया। घोड़े, हाथी और रथ के चलाने में तथा ढाल और तलवार के युद्ध में

जो अत्यधिक साहस, स्फूर्ति और सफाई रखता था, जो दिन-रात राज और मान के विषय में सर्वदा उदार भाव से सजग रहता था।

बड़े लक्ष्य से प्राप्त समुचित रूप से मिलने वाली, माल गुजारी और चुंगी इत्यादि के द्वारा सोना, चांदी, हरे रंग की वैदूर्य मणि और रत्नों के ढेर से जिसका खजाना भरपूर था। लघु मधुर (माधुर्य) चित्र (ओज) कान्त (कान्ति) इत्यादि शब्द-समय, (शब्द संकेत काव्य गुणों) से प्रशस्त और अलङ्कारों से युक्त गद्य-पद्यात्मक काव्य रचना में निपुण बौद्धिक गुणों से यथोचित चौड़ाई, लम्बाई, ऊँचाई, बोलने के स्वर, चलने की गति, शरीर, रंग, बल, सत्त्व आदि शारीरिक गुणों से तथा चक्र-वर्तित्त्व आदि के द्योतक शंख-चक्र आदि के चिन्हों से जिसकी आकृति चमक रही थी।

वीरतापूर्ण कार्यों से जिसने स्वयं "महाक्षत्रप" उपाधि को धारण किया।

जिसने राजकुमारियों के स्वयंवर में अनेक जयमालाओं को गले लगाया। महाक्षत्रप के द्वारा रुद्रदाम्ना नाम से सैंकड़ों वर्षों के लिए गाय और ब्राह्मण की रक्षा के लिये पुण्य और यश की वृद्धि के लिये बेगार और भेंट आदि से नगर के लोगों को अपने कोष से अत्यधिक धनराशि से थोड़े ही समय में पहले की अपेक्षा तिगुने लम्बे, चौड़े और सुदृढ़ बांध को और अधिक (सुदर्शन झील को) सुन्दर बनवा दिया।

इसके लिए महाक्षत्रप के बुद्धिमान् मन्त्रियों द्वारा मन्त्री के योग्य सारे गुणों से युक्त सुदर्शन झील के पुनः निर्माण कार्य के प्रति जिन्होंने असहमति प्रकट कर दी थी। ऐसे मन्त्रियों द्वारा पुनः बांध बांधने की आशा टूट जाने से प्रजा के त्राहि-त्राहि करने पर प्रजास्विदा अधिष्ठान के लिये (अपने शासन में) नगर निवासी एवं प्रान्त वासियों पर कृपा करने के लिये समस्त आनर्त और सौराष्ट्र प्रदेश के पालन के लिए नियुक्त किये गए पहलव कुलेप के पुत्र ने अपनी प्रकाण्ड बुद्धि से धर्म-अर्थ और व्यवहार के समुचित दर्शन से अनुराग प्रेम को बढ़ाने वाले संयमी स्थिर निरभिमानी आर्योचित गुणों से सम्पन्न स्वयं अधिष्ठित किये हुए

राजा के धर्म कीर्ति और यश को बढ़ाते हुए सुदर्शन झील के बांध को बांध दिया।

तृतीय पाठ

आदर्श गृहिणी

निम्नलिखित शब्दों को अर्थों में प्रयुक्त किया गया।

(1) **प्रदर्श्यमानाम्** = दिखाई जाती हुई।

(2) **काचन** = किसी को।

(3) **ददर्श** = देखा।

(4) **अस्यां** = इसी पर।

(5) **अवयवा:** = अंग।

(6) **नातिह्रस्वा** = बहुत छोटे नहीं।

(7) **साकूतम** = विशेष अभिप्राय से।

(8) **आलोकिता** = देखी।

(9) **आदाय** = लेकर।

(10) **विशोष्य** = सुखा कर।

प्रस्तुत पाठ का अर्थ इस प्रकार है :

द्रविड़ देश में काची नामक नगरी थी उसमें शक्ति कुमार नामक कई करोड़ की पूंजी वाला सेठ का पुत्र था। वह जब लगभग अठारह वर्ष का हो गया, तब उसने सोचा, "उस व्यक्ति को निश्चय ही सुख नहीं है जिसकी पत्नी न हो या हो तो अनुकूल पत्नी न हो तो क्यों न गुणवती पत्नी कैसे प्राप्त करूं ?" इसके वाद दूसरों के विश्वास पर लाई गई पत्नियों में अभीष्ट (गुण) वैभव न देखकर सामुद्रिक (रेखा भविष्य बताने वाले) का स्वांग रचकर कपड़े के छोर में प्रस्थ (सेर चार) भर शालि (एक प्रकार का आजयाधान या मुंजी) बांध कर पृथ्वी का भ्रमण करने लगा। जिस किसी सुन्दर लक्षणों वाली सजातीय कन्या को देखता था तो कहता था —

हे कल्याणी ! क्या तुम प्रस्थ भर मुंजी से हमें स्वादिष्ट भोजन करा सकती हो। उसकी हँसी उड़ाई गई और तिरस्कार किया गया तथा एक घर से दूसरे घर में प्रवेश कर घूमने लगा।

एक बार शिबि नामक देश में कावेरी नदी के किनारे के नगर में अपने माता-पिता के साथ (आई) एक लड़की को देखा। उसका महान् वैभव (सम्पन्नता) समाप्त हो चुका था। कौडी और श्रेष्ठ धन समाप्त हो चुका था। गहने बहुत कम थे। धाय ने उसे दिखाया, उस पर नेत्र गड़ाकर उसने सोचा, इस कन्या के सभी अंग निश्चय ही न तो बहुत मोटे हैं और न ही बहुत पतले हैं। न बहुत छोटे हैं, न बहुत लम्बे हैं। कुरूप नहीं है, स्वच्छतायुक्त है, हाथों की उंगलियों के नीचे का भाग लाल है। उन हाथों पर जौ, मछली, कमल आदि अनेक मंगल रेखाओं के चिन्ह हैं। पैरों, टखनों का जोड़ बराबर (छेद रहित है), मांस से भरे हुए और नसों से भरे नहीं दिखते। गोलाकार नाभि बहुत पतली, कुछ दबी और गहरी है। पेट तीन रेखाओं से विभूषित है। धन-धान्य और पुत्रों की अधिकता सूचक चिन्ह वाली रेखा से चिन्हित है। उन बाहु-लताओं के मणि तुल्य नख चिकने और कोमल हैं, उंगलियां सीधी, क्रमशः गोलाई लिए हुए पतली होती जाती तथा लाल हैं। कंधे का भाग अच्छी तरह झुका है। उन बाहु-लताओं में कोमलता है तथा जोड़ की गाँठ दबी हुई है। उस ओड़ के मध्य भाग में लालिमा है। ठोड़ी अत्यन्त कमनीय है। गोल गाल भरा हुआ और तना है। लता के समान भौंह न सटी हुई, टेढ़ी, काली तथा चिकनी है। नाक तिल के उस फूल के सामान अत्यन्त विकसित नहीं हुआ है। आंखें काली, लाल तथा सफेद इन तीनों भागों से युक्त चमकीली आकर्षक और चंचल गति वाली धीमी और विस्तृत हैं। कपाल चन्द्रमा के समान सुन्दर है, घुंघराले बालों की पाँत नीलम की सिल की आकृति की और कुण्डल बनाये गये मुंदे कमल की नाल के कारण सुन्दर और लम्बी केश बहुत टेढ़ी नहीं है। किनारे-किनारे भी पिङ्गल लालिमायुक्त काली कान्ति रहित और विस्तारयुक्त है। प्रत्येक स्वभाव से समान, चिकना और काला है, यह अनुभूत आकार अच्छे स्वभाव से रहित नहीं हो सकता और मेरा दिल इसी के प्रति लगा

है। अतः परीक्षा करके इसी से ब्याह करना चाहिए। यह पूर्ण निश्चित है कि बिना विचार काम करने वालों के आगे पश्चात्ताप की परम्परायें गिरती हैं। यह सोच कर स्नेहपूर्ण दृष्टि लेकर बोला -हे कल्यानी! क्या तुम में इस प्रस्थ भर धान से तैयार किया हुआ भोजन मुझे कराने का कौशल है?

तब उस बूढ़ी नौकरानी ने अभिप्राय के साथ देखा। उसके हाथ से प्रस्थ भर धान लेकर दरबान के पास के एक स्थान को भलीभांति पानी से तर और साफ कर पैर धोने का पानी देकर बैठाया। उस लड़की ने उन सुगंधित मुंजियों को मलकर धूप में सीमित रूप से सुखाकर धीरे-धीरे उलट-पुलट कर कड़ी और समतल जमीन पर उखल में मूसल के नीचे के भाग से हल्के हाथों कूटती हुई बिना टूटी भूसी के साथ चावल अलग कर लिए फिर धाय से बोली माता! यह भूसी गहनों को साफ करने में समर्थ है। स्वर्णकार इसके ग्राहक हैं। उन्हें यह देकर प्राप्त कांकिणियों (विशेष सिक्के पैसे) से ठोस न अधिक गीली और न अधिक सूखी लकड़ियां कम चीज़ पकाने लायक छोटी हांडी और दो कटोरे ले आओ। उस के वैसे कर देने पर उसने वे चावल कुछ दबी, ऊपर मुख वाली तथा फैले पेड़ वाली कूकलर (वृक्ष का नाम) की वनी ओखली में मूसल से पीटा। उस (मूसल) का मुंह लोहे की चादर से मढ़ा था। उसकी काया समतल थी, मध्य में पतलापन प्रतीत होता था। विशेष बड़ा भारी और खैर की लकड़ी से वना था। निपुण और सुन्दर उत्क्षेपण (मूसल उड़ाने की क्रिया) तथा अवक्षेपण (नीचे गिराने की क्रिया) के द्वारा चावल की कनियां और बाली के अग्र भाग सूप से साफ कर चावल बार-बार पानी में धोकर उबले हुए पंच गुणे पानी में चूल्हे की पूजा (पकाये जाने वाले अन्न का थोड़ा भाग चूल्हे की आग में डालकर) के बाद डाल दिया। जब चावल के अङ्ग खूब ढीले हो गए, वे फूल गए तथा कली की (कढ़ी को) स्थिति पार कर गए, तब आग कम कर उस बलटोई से, जिसके मुखपर ढक्कन लगाया गया था मांड गिरवा दिया। फिर कलछुल से चलाकर सीमित रूप से उलट-पुलट कर भात के समान रूप से पक जाने पर बलटोई औन्धा दी। ठोस

लकड़ियां जल से तर कर उनकी आग शान्त कर उन्हें कोयले के रूप में बदल दिया और उनके ग्राहकों के पास भेज दिया कि इनसे प्राप्त काकिणियां देकर साग, घी, दही, तेल, आंवला और इमली जितना मिल सके ले आओ। इसके द्वारा वैसा किए जाने पर दो-तीन व्यंजन तैयार कर भात के उस मांड को नए सकोरे में रखकर और गीली रेत पर बैठा कर बहुत हल्की पंखे की हवा से ठंडा कर नमक आदि सामान डाला और जलते कोयले पर सुगन्धित पदार्थ रखकर धुएं से सुगन्धित किया। फिर उक्त आंवले का बारीक चूर्ण कमल की सुगंध से युक्त करके धाय द्वारा स्नान कर लेने को प्रेरित किया। उस (लड़की) ने (स्वयं) स्नान से शुद्ध होकर तेल और आंवला दिया। और उस (शक्ति कुमार) ने क्रम से स्नान किया। स्नान कर स्वच्छ और साफ फर्श पर रखे पीढ़े पर बैठ कर आँगन के केले के पेड़ के सफेद और (हल्के हरे) और इस प्रकार छोड़े गए पत्ते के ऊपर के तीन भाग (पेड़ पर ही) शेष रहे, रखे हुए सकोरे का जोड़ा पकड़ता हुआ बैठ गया। इधर उस (लड़की) ने वह पेय (भातयुक्त मांड) ही पहले परोसा। उसे पीकर उसकी राह चलने की थकावट दूर हो गयी। रोमांच हो आया और सारा शरीर खूब (पसीने से) गीला लिए हुए बैठ गया। फिर धान का भात दो कड़छियां देकर थोड़ा घी, चटनी और सब्जी परोसी और इस (शक्ति कुमार) को त्रिजातक (एक सुगन्धित पदार्थ) के साथ फेंटे हुए दही से सुगन्धित और शीतल मट्ठे तथा कांजी के साथ शेष भात खिलाया। भात के बचे रहने पर ही वह तृप्त हो गया और पानी मांगने लगा। इसके बाद नए शृंगार (एक प्रकार का टोंटीदार बर्तन) से भरा अगरबत्ती के धुएं से वासित खिले हुए कमलों से सुगन्धयुक्त जल टोंटी की धार के रूप में गिराया। फिर उसने मुख पर रखे हुए सकोरे से वह पानी गले तक पिया। उसकी बरौनियां बर्फ जैसे ठण्डे कणों से विस्तारित तथा लाल हो रही थीं। सुगन्ध प्रवाह के दबाव से नाक के छिद्र खिल गए थे। मधुरता की अधिकता से जीभ आकृष्ट हो गई थी। सिर हिलाने के संकेत से रोकी जाने पर कन्या ने फिर दूसरे जल पात्र से आचमन के लिए जल दिया।

उधर वृद्धा के द्वारा उसकी जूठन हटा कर ताजा गोबर से लेपी फर्श पर वह अपना उत्तरीय वस्त्र भाग बिछाकर क्षण भर सोया। संतुष्ट होकर विधि-पूर्वक विवाह कर कन्या को ले गया। ले जानेके बाद इसकी परवाह न कर उसने एक वेश्या को पत्नी बनाया। उस (लड़की) ने उस (वेश्या) के प्रति भी प्यारी सहेली जैसा आदर किया। और आलस्य छोड़कर देवता की भाँति पति की सेवा की। घर के काम सुचारु रूप से किये। उदारता की निधि बनकर उसने नौकर-चाकर वर्ग को अपने वश में कर लिया। उसके गुणों से वशीभूत होकर पति ने सारा का सारा परिवार उसके ही अधीन करके उस अकेली के अधीन प्राण और शरीर उसके धर्म, अर्थ और काम का उपभोग किया। अतः मेरा कहना है :

गृहस्थ के लिए प्रिय और हितकर हर पत्नी के गुण होते हैं।

चौथा पाठ

वसन्त वर्णनम्

कठिन शब्दों के अर्थ—

(1) दुष्कुलः = नीच कुल में पैदा होने वाला।
(2) तामरसैः युक्त = लाल कमल।
(3) सुराजा = अच्छा राजा।
(4) वास्तुकः = चतुर।
(5) शक्रः = देवताओं का राजा इन्द्र।
(6) महावीरः = महान पराक्रमी।
(7) षिङ्गः = व्यभिचारी।
(8) महाश्रृंगारी = खूब सजने वाली।

संस्कृत का हिन्दी में अर्थ—

(सुबन्धु रचित वासवदत्ता से)

(विकसित होते हुए आमों की मञ्जरियों के समूहों में (घूमकर) गिरते हुए भौंरों के समूह की, मद के कारण मधुर और अव्यक्त झन-झन की आवाज को झरने की डांटने से जिन परदेशी आदमियों को सन्ताप

उत्पन्न किया जा रहा है। कोमल मलयाचल से आई दक्षिण पवन के द्वारा हिलाये हुए आम के बौरों के रस को चखने से मधुर, गले से युक्त कोयलों की कू-कू की आवाज से भरी हुई सभी दिशाओं वाला, खिले हुए कमलों के समूहों के छिपते हुए मस्त राजहंसों के झुण्डों के शोर से कोलाहलयुक्त, समस्त सरोवरों वाला, कोयलों के तेज नाखूनों और चोंचों के अग्रभागों से फाड़े हुए पादर के फूलों की कलियों के छेदों से बाहर निकलती हुई मीठे मरकन्द की धाराओं की वृष्टियों के कण समूहों से लिपटे हुए दक्षिण पवन रूपी कामदेव के हाथों से घायल वियोगिनी नारियों के दिल रूपी तीर वाला, मदिरा के नशे से प्रसन्न नारियों के मुख रूपी कमलों से भरी हुई चुल्लियों की शराबों के सिचन से रोमांचित (पुष्पित) मौलसिरी के वृक्षों से युक्त, कामवासना के आनन्द से विवश सुन्दर नारियों के नूपुरों से सुन्दर एवं चंचल पैर रूपी कमलों के कोमल प्रहारों से पुष्पित सैंकड़ों अशोक वृक्षों से युक्त प्रत्येक दिशा में अत्यधिक भद्दी बातों को बोलने वाले, असंख्य मसखरों द्वारा गाए जाते हुए गीतों को सुनने के लिए उत्सुक कामी जनों द्वारा आरम्भ की गई हाथों से बजाई गई, तालियों के साथ गाए जाते हुए, गीतों की ताल ध्वनि को सुनने से अनेक विरहीजन मूर्च्छित हो रहे हैं।

दुर्जन की तरह लाल कमलों से युक्त या विहीन चमेली के फूलों से रहित राजा रावण के समान हल्के पीले और लाल रंग के सैकड़ों नए पत्तों से भरा हुआ खूब सजने वाला छैला सुन्दर मलय पवन से युक्त अच्छे राजा के समान पूर्ण विकसित नील कमलों वाला नागरिक चतुर, सभ्य, बर्फ आदि के हटने से फैले हुए सुन्दर आकाश और दिशाओं से युक्त अथवा सुख की इच्छा को बढ़ाने वाला, उत्कृष्ट कवि की काव्य रचना की तरह बर्फानी शिशिर काल की वायु के गिरने से कोई सम्बन्ध न रखने वाला, अच्छे पुरुषों की तरह रात्रि की दीर्घता से रहित। मछुवे की तरह कमल नील, कमल तथा सात के फूलों को प्राप्त करने वाला जलपूर्ण तालाब में विद्यमान पक्षियों का समूह दौना, महआ नामक शिशिर ऋतु में होने वाली सुगन्धित औषधि का तिरस्कार करने वाला.

इन्द्र के समान इन्द्रायन नामक वृक्ष के फलों से सुन्दर महापराक्रमी की तरह शिशिर ऋतु में उत्पन्न दमन लता, अथवा दमन पुरुष का तिरस्कार करने वाला व्यभिचारी कामुक पुरुष मेहंदी की झाड़ियों से सुन्दर बसन्त का समय आ गया है।

पांचवाँ पाठ

शुकनासोपदेशः

'कादम्बरी वाण भट्ट'

कठिन शब्दों के अर्थ।

शब्दार्थ

(1) आलोक्य = देखकर।
(2) गृहीत्वा = लेकर।
(3) रागम् = आसक्ति।
(4) परिपाल्यते = संभाली जाती है।
(5) अभिजनम् = कुलीनता।
(6) ईक्षते = देखती है।
(7) अनुरुध्यते = अभ्यास करती है।
(8) आद्रियते = आदर करती है।
(9) वैदग्ध्यम् = पाण्डित्य।
(10) गणयति = विचार करती है।
(11) अपनीयते = दूर कर दिया जाता है।

हिंदी में अनुवाद—

मंगल के अभिलाषी आप तब तक पहले लक्ष्मी को ही देख लें। श्रेष्ठ योद्धाओं के तलवार रूपी कमल वन मे भ्रमरी रूपा यह लक्ष्मी एक साथ में रहने से परिचय बढ़ जाने के कारण वियोग के समय में मनोविनोद के चिन्ह रूप में पारिजात के कोमल पल्लवों से राग (आसक्ति)

चन्द्रकला से अत्यन्त कुटिलता, उच्चैश्रवा नामक इन्द्र के घोड़े से चंचलता हलाहल विष सी मोहक, शक्ति, मदिरा से मादकता और कौस्तुभमणि से क्रूरता आदि लक्षणों को लेकर ही मानों यह लक्ष्मी क्षीर समुद्र से बाहर निकली है।

न ही इस संसार में कोई दूसरी वस्तु ऐसी अपरिचित है जैसी कि यह दुष्टा है। क्योंकि प्राप्त हो जाने पर भी बड़ी कठिनाई से पाली जाती है राजोचित गुणों के बन्धन से दृढ़ रूप से बंधी लुप्त हो जाती है। उत्कट अभिमान से युक्त हजारों योद्धाओं द्वारा उठायी हुई तलवार रूपी लताओं के पिंजरे में पकड़ कर रखी हुई भी निकल जाती हैं। मदजल रूपी वर्षा से अन्धकार कर देने वाले हजारों हथियारों द्वारा रचित सघन समूह द्वारा सुरक्षित रखी जाने पर भी भाग जाती है।

यह लक्ष्मी न परिचय के बन्धन को रखती है, न उत्तम कुल को देखती है, न सुन्दरता को देखती है, न कुल परम्परा का अनुसरण करती है, न चातुर्य को ही गिनती है, न शास्त्र की सुनती है, न धर्म का अनुसरण करती है, न त्याग का ही आदर करती है, न जानती है, न सामुद्रिक शास्त्रोक्त मनुष्य के शरीर में रहने वाले लक्षणों को ही प्रमाण बनाती है। गन्धर्व नगर की पंक्ति की भान्ति देखते-देखते ही नेत्रों के सामने से अलक्ष्य हो जाती है.

आज भी मानो मन्दराचल द्वारा घुमाये जाने से उड़े हुए भंवर से उत्पन्न भ्रान्ति के संस्कार से युक्त यह लक्ष्मी घूमती रहती है। कमलिनियों में विचरण के सम्बन्ध से मानों लगे हुए कमल नाल के काँटों से घायल हुई यह कहीं पर ही दृढ़ता से पैर रख पाती है। दानी को मानो बुरा स्वप्न समझ कर स्मरण नहीं करती। मनस्वी को पागल समझ कर उसका उपहास करती है। यह लक्ष्मी परस्पर-विरोधी अपने चरित्र को मानो जादू की तरह दिखाती हुई संसार प्रकट करती है। शरीर धारण करने वाली होती हुई भी प्रत्यक्ष नहीं दिखाई पड़ती है। पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु में अनुरक्त होती हुई भी दुष्ट लोगों की प्रिय है।

धूलमयी यह लक्ष्मी स्वच्छ वस्तु को भी कलुषित कर देती है और

जैसे-जैसे यह चंचल लक्ष्मी प्रदीप्त होती है, वैसे-वैसे दीप शिखा की भान्ति काजल के समान मलिन कार्यों को उगलती है।

निश्चय ही किसी ऐसे व्यक्ति को नहीं देखता हूं जो इस अपरिचित लक्ष्मी के द्वारा दृढ़ आलिङ्गित न किया गया हो और तत्पश्चात् ठगा न गया हो। यह चित्रलिखित होने पर भी निश्चित रूप से चलती है। मिट्टी, लकड़ी आदि की पुतली होती हुई जादू का खेल करती है। केवल सुनी जानें पर भी कपट करती है। इस प्रकार दुष्ट आचरण वाली इस लक्ष्मी के द्वारा जैसे-कैसे भाग्यवश भी पकड़े गये राजा लोग विकल हो जाते हैं तथा हर प्रकार की उच्छृंखलताओं के निवास स्थान हो जाते हैं। जैसे कि राज्याभिषेक के समय ही मंगल पात्रों के जलों से मानो इनकी उदारता धो दी जाती है। यज्ञ के धुएँ से मानो इनका हृदय मलिन कर दिया जाता है। पुरोहित की कुश रूपी झाड़ुओं से इनका गुण मानो दूर कर दिया जाता है। रेशमी पगड़ी बांध कर इनके बुढ़ापा आने के स्मरण को मानो ढक दिया जाता है। छत्रमण्डल से मानो इनका परलोक दर्शन रोक दिया जाता है। चंवर की वायु से मानो इनके सत्य बोलने के गुण को उड़ा दिया जाता है, बेंत की छड़ी से मानो इनके सभी गुण दूर कर दिये जाते हैं। जयकार के कोलाहल से मानो शुभ वचन तिरस्कृत कर दिये जाते हैं। ध्वजाओं के वस्त्रों के छोर से मानो इनकी कृति पोंछ दी जाती है।

थक जाने के कारण पक्षियों की शिथिल गर्दन के समान चंचल, जुगनू के समान चमकने की भान्ति, थोड़ी देर के लिये मन हरने वाली, ज्ञानियों द्वारा निन्दित सम्पत्तियों से लुभाये गए थोड़े से धन की प्राप्ति के अहंकार से जन्म को भूले हुए अनेक दोषों के बढ़ जाने से दूषित रक्त के समान, आसक्ति के आवेग से सताये जाते हुए, नाना प्रकार के विषय-भोगों के आस्वाद के लिये लालायित, पाँच होती हुई भी हजारों की संख्या में प्रतीत होने वाली इन्द्रियों से क्लेश पहुंचाये जाते हुए चंचल स्वभाव के कारण प्रसार को प्राप्त हुए, एक होते हुए भी मानो हजारों की संख्या वाले मन से व्याकुल किये जाते हुए कुछ राजा लोग परेशान हो जाते हैं।

ये राजा लोग मानो सूर्यादि ग्रहों द्वारा पकड़ लिये जाते हैं। मानो भूतं द्वारा दबा लिये गए हैं। मानो तन्त्र-मन्त्रों द्वारा आविष्ट कर लिए जाते हैं। मानो बली हिंसक प्राणियों से हठात् जकड़ लिये जाते हैं। मानो वायु द्वारा इधर-उधर उड़ा दिये जाते हैं। मानो पिशाचों द्वारा ग्रस्त कर दिये जाते हैं। मानो कामदेव के बाणों द्वारा मर्माहत हुए वे राजा लोग हजार प्रकार की मुखाकृतियाँ बनाते हैं। मानो धन की गर्मी से पकाये जाते विभिन्न प्रकार की चेष्टाएँ करते हैं। मरणासन्न व्यक्तियों के समान अपने परिवार जनों एवं सम्बन्धियों को नहीं पहचानते हैं। काले साँप से डसे दष्ट व्यक्ति शक्तिशाली मन्त्रों से भी होश में नहीं आते। मानो पाप से प्रतिदिन पूरित होते हुए भी वे अधिक मोटे हो जाते हैं और उस अवस्था में सैंकड़ों व्यसनों के लक्ष्य बने हुए अपने पतन को उस भान्ति नहीं जान पाते जैसे वामी की घास के अग्रभाग पर स्थित जल-बिन्दुओं को अपने गिरने का किञ्चित् भी आभास नहीं होता।

दूसरे अन्य राजा तो स्वार्थ साधन में तत्पर धनरूपी माँस भक्षण में वृहद् सरीखे, राज-भवन रूपी कमल वन में बगुले के समान, अन्दर ही अन्दर स्वयं राजाओं का उपहास करने वाले दोषों में भी गुणों का आरोप करने वाले, धूर्तों द्वारा जुआ मनोरंजन है। पर-स्त्री गमन चतुरता है। अपनी स्त्री के त्याग में विरक्त होना है। गुरुओं के वचनों का उल्लंघन करना परवशता का न होना है। मनमानी करना प्रभुता है। चंचलता उत्साह है। विशेषज्ञ न होना पक्षपात से रहितत्व है।

इस प्रकार के ढंगों में कुशल धूर्तों द्वारा अलौकिक जनों के ही उपयुक्त स्तोत्रों द्वारा ठगे जाते हुए धन के घमण्ड से मतवाले हृदय वाले, सुध-बुध न होने के कारण "ऐसा ही है" इस प्रकार मिथ्याभिमान करने वाले, मरणशील होते हुए भी अपने मन में मानो दिव्य अंश के अवतार को, मानो देवत्व को; मानो दिव्य शक्ति सम्पन्नत्व को मानते हुए अलौकिक जनोचित हाव भावों को प्रारम्भ करने वाले सब लोगों के उपहास के पात्र बन जाते हैं। वे राजा लोगों को अपना दर्शन देना भी कृपा करना मानते हैं। किसी पर दृष्टि डाल देने को भी उपकार मानते हैं। वार्तालाप

करने को भी पुरस्कार देना मानते हैं । आज्ञा प्रदान करने को भी बरदान प्रदान बैठते हैं । किसी को छू देना उसे पवित्र मानते हैं तथा झूठे महत्त्व के घमण्ड से भरे हुए राजा लोग देवताओं को प्रणाम नहीं करते । ब्राह्मणों की पूजा नहीं करते । मानने योग्य व्यक्तियों का सम्मान नहीं करते, पूजनीयों की पूजा नहीं करते । अभिवादन के योग्य व्यक्तियों का अभिवादन नहीं करते, पधारे हुए गुरुजनों का उठकर स्वागत नहीं करते हैं । वृद्धों के उपदेश वृद्धावस्था की परेशानी से उत्पन्न बकवास मान कर उनकी उपेक्षा कर देते हैं । अपनी बुद्धि का तिरस्कार समझ कर मन्त्रियों के परामर्श की उपेक्षा करते हैं । राज्य के हित के लिये यथार्थ बोलने वाले को क्रोध से देखते हैं । सब प्रकार से उस का ही स्वागत करते हैं । उसी को अपने पास बैठाते हैं, उसी को आगे बढ़ाते हैं, उसी के साथ सुख में बैठते हैं, उसकी ही बातें सुनते हैं, उसी में धन आदि की वृष्टि करते हैं, उसे बहुत मानते हैं, उसे ही विश्वास पात्र समझते हैं, जो सभी कार्यों को त्याग कर देता है । हाथ जोड़ कर निरन्तर रात-दिन इष्ट देवता के समान उनकी स्तुति करता रहता है । अथवा उनकी बड़ाई प्रकट करता है । अथवा उन राजाओं के लिये कौन-सा काम उपयुक्त है, जिनके लिये प्रायः अति कठोर उपदेशों से क्रूर बना कौटिल्य का अर्थ शास्त्र प्रमाण है ।

अतः हे कुमार ! इस प्रकार की 'अति कुटिल' तथा दुःख देने वाली हजारों चेष्टाओं से कठोर बने हुए राज्य शासन में और इस महान् अज्ञान के अन्धकार वाले यौवन में, ऐसा प्रयत्न करो कि लोगों द्वारा तुम्हारा उपहास न किया जाये, सज्जन लोग निन्दा न करें, गुरुजन किसी कारण न धिक्कारें, मित्रगण उलाहना न दें । विद्वानों द्वारा आलोचना के पात्र न बनो । कामियों द्वारा प्रकट न किये जाओ । चतुर पुरुषों द्वारा हंसे न जाओ । लम्पटों द्वारा उपभोग न किये जाओ । सेवक रूपी सियारों द्वारा नष्ट न कर दिये जाओ । धूर्तों द्वारा ठगे न जाओ, कामिनियों द्वारा लुभाये न जाओ । लक्ष्मी छोड़कर न चली जाये । अंहकार से नचाये न

जाओ, आसक्ति से आकृष्ट न हो जाओ। तुम्हारा यह राज्य-सुख किसी के द्वारा छीन न लिया जाये।

यद्यपि आप स्वभावत: ही धीर तथा गम्भीर हैं तथा आपके पिता ने बड़े प्रयत्न से सम्पूर्ण शास्त्रों का अध्ययन करा कर, पूर्णतया संस्कार युक्त बना दिया है, तो भी धन आदि तो चंचल चित्त वाले को तथा असावधान व्यक्ति को मतवाला बनाते हैं। सर्वथा सुरक्षित होने के कारण ये सब आपको विचलित नहीं कर सकते तो भी आपके अन्दर विद्यमान् गुणों के द्वारा उत्पन्न मेरे अन्दर के सन्तोष ने ही मुझे आदेश देने के लिये विवश होकर प्रेरित कर दिया है।

बार-बार आप से यही कहा जाता रहा है कि धीर-वीर स्वभाव सम्पन्न को भी, प्रयत्नशील पुरुष को भी यह दुराचारिणी राज्य लक्ष्मी, अति शीघ्र सन्मार्ग से भ्रष्ट कर देती है। आप हर प्रकार से अपने पिता द्वारा किये जाने वाले मंगल पदार्थों से युक्त नवीन युवराज्याभिषेक के उत्सव का अनुभव करो। वंश परम्परा से प्राप्त तथा अपने पूर्वजों द्वारा पूर्णतया सम्भाले गये राज्य का भार ग्रहण करो। शत्रुओं के सिरों को झुकाओ और अपने बन्धुवर्ग एवं इष्ट मित्रों को ऊपर उठाओ। इस महान् राज्याभिषेक के अनन्तर ही विश्व विजय करने के लिए तैयार होकर सभी दिशाओं में भ्रमण करते हुए आप पिता जी के द्वारा अपने अधीन की हुई सात द्वीप रूपी आभूषण वाली इस पृथ्वी को फिर से जीतो। हे युवराज ! तुम्हारे लिये पूर्ण प्रभाव दिखाने का यही समय है क्योंकि यह निश्चय है कि पराक्रमशील एवं प्रतापी राजा त्रिलोकदर्शी महात्मा की भान्ति सिद्धादेश होता है। अर्थात् उसके आदेश का उल्लङ्घन कोई नहीं करता। इतना उपदेश देकर मन्त्री शुकनास शान्त हो गया।

उपदेश:

छठा पाठ

शिववीरस्य राष्ट्रचिन्तनम्

कठिन शब्द तथा उनके अर्थ —

(1) तप्यमानः = दुःखी होता हुआ।
(2) अध्युवास — ऊपर बैठ गया।
(3) मनसि = मन में।
(4) चरणौ = पैरों के।
(5) प्रणमामि = प्रणाम करता हूं।
(6) स्पृशामि = छूता हूँ।
(7) अन्वेष्टुम = ढूंढने के लिये।
(8) निःसारितः = बाहर निकाला गया।
(9) अन्यतमम् - एकमात्र।
(10) क्रोडे = गोद में।
(1) आगत्य = आकर।
(12) प्रेषिते = भेजने पर।
(13) गृह्येय - पकड़ा जाऊँ।
(14) विचारयन एव = सोचते हुए।
(15) अद्राक्षीत् = देखा।
(16) उदस्थात् = उठ खड़ा हुआ।
(17) भवतः - आपका।
(18) एतेन = इससे।
(19) कूर्चं = दाढ़ी को।
(20) अवधूतः = संन्यासी।
(21) आचरन्ति = धारण करती हैं।
(22) आन्दोल्य = हिलाकर।
(23) किमिव = क्यों।
(24) अल्पीयसी = छोटी-सी।
(25) साधयितुम = पूरा करने के लिये।

हिन्दी में अनुवाद—

महाराष्ट्र के राजा भी चिन्ता की अग्नि में तप रहे थे। निद्रा उन को नहीं आती थी। अतः पलङ्गों को छोड़ कर वहीं कुर्सी पर बैठ गये। मन में ही चिन्ता करनी शुरू की - ओह, मैं कहां जाऊँ, क्या करूं, कैसे नगर को पुनः प्राप्त कर सकूं, कैसे फिर से प्रताप दुर्ग पर चढ़कर हरी-भरी खुशहाल महाराष्ट्र की भूमि को देख सकूंगा? कैसे पुनः तोरण किले के सामने वाले हनुमान जी को प्रणाम करूंगा? कैसे फिर से राज दुर्ग के सिंहासन पर आरूढ़ होऊंगा? कैसे फिर से देवता के समान देव शर्मा के चरणों का स्पर्श करूंगा? हन्त! उस आश्रम में रहने वाली गौरसिंह की बहन की शादी के लिये वर को खोजने के लिये मैं प्रतिज्ञा कर चुका हूं। हां, सुना जाता है उसके लिये वरों में रामसिंह रघुवीर नामक युवक मेरे नौकर थे। ओह, ढूंढने योग्य वही मेरे द्वारा डांट-डपट कर निकाले गये हैं। हां, कैसे अपने पुत्र के वियोग से दुःखित ब्रह्मचारीवेष वाले महाराज जयसिंह को सान्त्वना दूंगा? निश्चय से निर्दोष रघुवीर को निकालने के पाप का यह फल है जो स्वयं आकर शत्रुओं की गोद में गिरा हूं। प्रथम मिलन में ही अनादर (तिरस्कार) को अनुभव कर रहा हूं। दूसरे दिन वह सन्देश मुझे प्राप्त हुआ जो राजा की सभा में कहा गया। उस समाचार ने कान के छेद को छुआ उसी का ही दण्ड है जो फिर से राजसभा में नहीं आना चाहिए। बहुत छोटी मेरी सेना (फौज) नगर से बाहर शिविर में है। पांच-छः आत्मीयों से तथा कुछ नौकरों के साथ यहां निवास कर रहा हूं (रह रहा हूं) यहां का वायु और वाणी अनुकूल नहीं है। छल से महाराष्ट्र देश को लौटने की आज्ञा के लिए भेजे गये आवेदन-पत्र में दिल्ली के कलङ्क (दाग) ने अन्य बातों के सम्बन्ध में अधिक लिखने पर भी आदेश के विषय में कुछ भी नहीं लिखा है। यदि बिना आज्ञा के भाग जाऊँ, उसके बाद अगर पकड़ा जाऊँ तो मृत्यु निश्चित है। अहो दुर्भाग्य, राघवाचार्य संन्यासी ने भी वचन को स्वीकृत नहीं किया। यह चोर है। यह लुटेरा है। यह शत्रु है। ऐसे विचार करते हुए जल्दी म्यान से बाहर छुरी को हाथ में

लेकर उठ खड़े हुए हैं। उन्होंने थोड़ा भी पास आते हुए जो एक भस्म और धूल वाले शरीर से भरा हुआ लटकती हुई जटा समूह में ढके हुए, कंधे, पीठ और छाती वाला, लम्बी दाढ़ी वाला, नीले रंग से रंगे कपड़ों वाले, बाएँ हाथ में मिट्टी की माला पकड़ी है. ऐसे मुसलमान भिक्षु को आते हुए मैंने देखा उसके बाद ऊँचे स्वर में साहस के साथ उसे पूछा : तुम कौन हो ? अरे, रात्रि के समय वह धीरे से बोले यह मनुष्य आपका शुभचिन्तक है। धीरे से बोला जिसका स्वर पहले सुना था। फिर भी कान से सुनता हुआ पहचानने में असमर्थ। फिर से पूछा। आपने नहीं समझा (नहीं पहचाना), उसने कहा। शुभचिन्तक यह राघवाचार्य संन्यासी है। उसको सुनकर महाराष्ट्र के स्वामी ने रोशनी को तेज़ करके देखकर नकली जटा. दाढ़ी. मूँछें इत्यादि को देखते हुए धीरे-से मुस्कराकर कहा — अवधूत (संन्यासी) धन्य हो. जो इस प्रकार भी दया करते हो किन्तु इन बन्द द्वारों में तुम कहां से आये हो ? वह कहने लगा (उसने कहा) : दीवारों को लांघ कर कष्ट से आया हूँ। मैंने यह कहा—आज कैसे यह रूपान्तर किया ? उसने कहा - इस नगर में वैष्णवों पर सब की दृष्टि पड़ती है, न ही मुसलमान फकीरों पर। इस प्रकार उसी वेष को मैंने धारण किया है। उसके बाद बैठ कर दोनों ने पल भर के बाद ही बात की।

महाराष्ट्र के राजा — आर्य कहां से आ रहे हैं ?

राघवाचार्य - व्रत की सिद्धि के लिये चारों ओर घूमता हूँ।

शिवाजी — आप जानते हो कुछ कुशल समाचार महाराष्ट्र का भी ? मेरी माता अच्छी है ? जनसमूह कुशलतापूर्वक है ? शुभ कुमारी कुशल तो है न ?

राघवाचार्य — दीनों के बन्धु, आप जैसे महाशय के हाथोंमें महाराष्ट्र भूमि के पालन-पोषण को छोड़ा है। उस प्रकार के शासन में अकुशल वार्तालाप कैसे हो सकता है। माता भी सकुशल है। आपकी कुशलता के लिये व्रतों का आचरण करती है। व्रतों को रखती है। वह कमज़ोर शरीर वाली चबूतरे पर सोने वाली व्रतादि के समय हल्के (सात्विक) पदार्थ को खाती हुई जीवित है।

शिवाजी —हाँ माँ (माता) ! (इस प्रकार मुँह को देखकर) आँसुओं की बूँदों को बहाने लगे ।

राघवाचार्य महाराज कुछ भी चिन्ता न करें । कुमार शम्भु वीर भी सकुशल हैं । घोड़े को चलाते हुए आपके दर्शन से प्रजा को खुश करते हैं । गाँवों-गाँवों, घरों-घरों, मन्दिरों-मन्दिरों में परमात्मा की आराधना की जाती है ।

शिवाजी – मेरी कुशलता के लिये परमेश्वर की आराधना की जाती है ।

राघवाचार्य वीरवर ! आपकी प्रजा में कौन अपने प्राणों से अधिक नहीं समझता है । अब कहीं बड़े भयंकर रूप वाले शिव की रुद्रावतार वाली मूर्ति नहलाई जाती है । कहीं पर हजारों ब्रह्मचर्य को धारण किये हुए ब्राह्मणों की मन्त्रों के साथ चण्डी के पाठ से भगवती दुर्गा आदृत की जाती है और कहीं पर नौ ग्रह और 16 मातृदेवियों के समूह से शोभित मण्डपों के नीचे वेदमन्त्रों से भगवान् अग्नि को घी आदि की आहुति से हवन किया जा रहा है । क्या कहूँ, थोड़ा भी अमंगल मैंने महाराष्ट्रीयों से नहीं सुना । मैं मानता हूँ । क्रोध रूपी अग्नि की ज्वालाओं से समस्त पृथ्वी को जलाकर राख किया जायेगा ।

शिवाजी --(कुछ-कुछ प्रसन्न हुए अंगों को हिलाकर) भगवन् ! शत्रु की कौन-सी क्षमता है जो मेरा अमंगल कार्य करने के लिये परन्तु आप के वचन को स्वीकार कर मैं यहा आया है । उस का फल ही भोग रहा हूँ ।

राघवाचार्य - श्रीमान, तो क्या दिल्ली नरेश से सन्धि कर ली ?

शिवाजी इस प्रकार क्यों लज्जित कर रहे हो ? आर्य सब कुछ आर्य जानते है ।

राघवाचार्य यहाँ रहना मुझे अच्छा नहीं लगता तो आज ही चल दीजिये । कौन नाम जाल से वायु तुल्य आपको रोकेगा ?.

शिवाजी मानता हूँ । कोई भी उपाय पलायन का सोच लिया है ।

राघवाचार्य –क्या आर्यों को भागने का मालूम है ?

शिवाजी —किस प्रकार ।

राघवाचार्य भगवान्, अनायास से, बिना प्रयत्न के किये गहरे अन्धकार में मुसलमान भिक्षु के वेष को धारण करके मेरे साथ निकल चलें श्रीमान् ।

शिवाजी उसके बाद ?

राघवाचार्य यद्यपि इस नगर में ऊँची दीवारें हैं। फिर भी पूर्व दिशा की ओर एक जगह महान् (बहुत बड़ा) कील और रस्सी की गांठ वाला बांस गड़ा हुआ है । उसका आलम्बन करके दीवार को फांदना बिना प्रयत्न किये हुए सफल है महाराष्ट्र के वीरों का। दूसरी ओर एक जंजीर लटक रही है । उसको पकड़ कर एक क्षण में ही भूमि को प्राप्त होंगे । वहां पर वृक्ष की छाया में छिपा हुआ एक घोड़ा होगा । उसी क्षण जाकर ही देखा जायेगा । यमुना में छोटी सी नाव है, वहाँ पर चप्पू को हाथ में लिये हुए दस नाव चलाने वाले आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। और वे आपको जल्दी से पहुँचा देंगे जिससे आप सुख से महाराष्ट्र को प्राप्त होंगे ।

शिवाजी – आपकी अत्यन्त प्रशंसा करता हूँ । आपके इस कार्य के लिये (इस उद्यम के लिये) परन्तु मानो यदि कोई रास्ते में पहरेदारों ने पहचान लिया तो ।

राघवाचार्य इस रास्ते में पाँच-छः हमारे महाराष्ट्र के वीर मुसलमान वेष को धारण करके पहरेदार बने हुए हैं । वे भी आपके शुभ की चिन्ता करते हैं ।

शिवाजी कोई भी दीवार के उल्लंघन समय में (पहचान ले) से परिचय मिले तो ? उसके बाद विघ्न उपस्थित हो तो ।

राघवाचार्य -- महाराज उसी समय स्थान में अन्धेरे में 12 महाराष्ट्र के वीर हाथ में तलवार लेकर (ढके हुए) हैं । यदि कोई विघ्न पैदा होगा तो उसका मरण निश्चित होगा ।

शिवाजी - उसके बाद चारों ओर यमुना के रास्ते में यदि कोई आक्रमण करे तो ?

राघवाचार्य— न डरो, न डरो । हमारे द्वारा शास्ति स्थान युद्ध में

बहुत से मुसलमान वीरों की पट्टिका तलवारें, वीरों के कपड़े, सिर के टोप, कमर में बांधी जाने वाली कपड़े या चमड़े की पेटियां पकड़ी गई हैं। उन्हीं से मुसलमान का वेष बनाये हुए उसके निरीक्षक आदियों से युक्त एक गुप्त सेना है। सैंकड़ों वीर भागों में चारों ओर गुप्त घूमते हैं।

शिवाजी—नाव में चढ़ने के समय यदि आपत्ति आती है तो ?

राघ नाविक भी योद्धा हैं। शस्त्र से परिपूर्ण ये नौकाएं हैं। यमुना के तट पर भी कपट वेश वाले भिक्षुक आपकी जम्हाई की शुरूआत के साथ मानो नीर का अनुकरण करते हैं।

शिवाजी किसी ने पहचान कर रास्ते में नौका की गति को रोक लिया तो ?

राघवाचार्य—यमुना के तट पर भी दोनों ओर पैदल सैनिक घुड़सवार सतर्क हैं।

नौका को रोकने के लिये यदि कोई समर्थ हो जायेगा तो सूर्य को भी रोकने के लिये भी समर्थ होगा।

शिवाजी - मथुरा में यदि आपत्ति पड़ती है तो ?

राघ—ऐसा मत कहो, मथुरा में हजारों आपके हितचिन्तक वैष्णव वेष में घूमते हैं।

शिवाजी (क्षण भर सोच कर) इसके बाद मेरे तम्बू में रहने वालों की दिल्ली नगर में रहने वाले आदमियों की क्या दशा होगी ?

राघ महाराज आपको न पाता हुआ दिल्ली का राजा उनको पकड़ कर भी छोड़ देगा।

महा- नहीं, ऐसी सम्भावना नहीं की जा सकती ? इस निर्दय पर जिसने अपने भाइयों को भी मार दिया हो और पिता को भी गिरफ्तार कर चुका है।

राघवाचार्य—अति सत्य है।

शिवाजी—आ किसने योगबल से ज्ञान लिया हो (क्षण भर सोचकर) आचार्य आपके समान शुभचिन्तक सहाय्य होगा। कारागार में भी (जेल

में भी) स्वतन्त्रता को प्राप्त कर लूंगा। किन्तु आश्रितों की मौत की गाल पर, कौर की तरह पड़ कर जीने की इच्छा करता हूँ। अभी भी हमारे हट जाने पर कहीं हमारे दोष को ही दिल्ली का राजा जयसिंह इत्यादि प्रकट करे जो आदर करने के लिये उतावले छोड़ कर ढिठाई से भाग गया। इस प्रकार का कोई प्रकट कर लिया है अपराध को दिल्लीश्वर के साथ जिन्होंने कहा उसी के साथ जायेंगे। महाराष्ट्र के वीरों को गुफा के शेर के बच्चे के समान कौन रोक सकता है। यदि क्लेश (दुःख) न हो तो उसको सूचित किया जाये हमारे पुजारी, रसोइये, लेखक, पाठक आदि तत्काल महाराष्ट्र के प्रति प्रस्थान करेंगे।

राघ – (सांस भर कर) धन्य हो महाराज !

प्राणों की भी चिन्ता करते हुए करुणा से अपने लोगों का शुभ सोचते हैं। राजाओं का धर्म है यही जो अपनों का पालन सदा सम्मान और चिन्तन करे। नौकर भी रो-रो कर छाती पीटती हुई माता को व्यस्त बालों से भूमि पर लुढ़कने से रुलाती हुई पत्नी को हे पिता, हे पिता, इस प्रकार के शोरों से मूर्छित करते हुए, आँचल को खींचते हुए बच्चों को तिनके के समान छोड़कर स्वामी के काम सिद्ध करने के लिये अपने शरीर को समर्पित करते हैं। किये हुए कार्य को स्वीकार करना राजाओं का प्रथम धर्म है। इस प्रकार आप धन्य हैं। इस प्रकार राजा के धर्म में पराधीन दया के सागर हैं।

द्वितीय खण्ड

सातवाँ पाठ

वासन्ती

कठिन शब्दों के अर्थ –

(1) **शून्यदृष्टि** = शून्य नजर वाली।
(2) **भ्रमता** = घूमते हुए।
(3) **आवृण्वती** = ओढ़े हुए।

(4) समुत्थाय = उठकर ।
(5) व्यसनितां = बुरी आदत ।
(6) कलहं = लड़ाई ।
(7) निर्गतः = निकल गया ।
(8) वादिनः = कहने लगे ।
(9) विलसितम् = खेल ।
(10) शल्यम् = कांटा ।
(11) बिलसन = इठलाती हुई ।
(12) लभतेस्म = प्राप्त करता था ।
(13) आकर्ण्य - सुनकर ।
(14) अभिधाय = कहकर ।
(15) आरभ्य = लेकर ।

हिन्दी में अनुवाद अथवा सप्रसंग व्याख्या—

श्री दीना नाथ शर्मा अपनी पुत्री वासन्ती को अत्यन्त दुःखी देख करके बोले : हे पुत्री, किस कारण तुम यहाँ मौन भ्रमण करती हुई अत्यधिक दुःखी प्रतीत हो रही हो ? अपने पिता के वचन सुन कर यथा शीघ्र हवा में उड़ते हुए अपने दुपट्टे को सम्भाल कर, अपने पिता दीनानाथ शर्मा से बोली : हे पिता जी ! आज प्रातःकाल से वसन्त के विषय में अत्यन्त दुःखी हृदय से उसके भाग्य को दुःकर देख रही हूँ (क्योंकि वसन्त वासन्ती का ज्येष्ठ भाई था)। उसके बाद दीनानाथ शर्मा किञ्चित् गम्भीर भाव से फिर बोले। हे बेटी, तुम व्यर्थ की चिन्ता मत करो। क्योंकि वह मेरे द्वारा बार-बार मना करने पर भी उस दुर्व्यसन को नहीं छोड़ता है। इसलिये मैंने अब उसको समझाना भी छोड़ दिया। आज ही देखो किस प्रकार झगड़ा करके गया। भगवान् ने एक ही पुत्र दिया, वह भी इतना मूर्ख दिया। यह विधाता की ही इच्छा है और क्या बोलूं ? इस प्रकार बोलने के बाद दीनानाथ शर्मा का शरीर अत्यन्त चिन्ता से व्याकुल हो गया। इस प्रकार वासन्ती पिता की दशा देख करके तथा उनकी चिन्ता के विषय में परिवर्तन करने हेतु वह खिड़की से उठकर बोली, छः बज गये

है। इसलिये आपका संध्यावन्दन का यह समय है। भोजन लगभग पक ही गया होगा, इस प्रकार बोल करके वह अन्दर चली गई।

दीना नाथ शर्मा का घर लक्ष्मणपुर के मध्य में था। इनके घर में पत्नी एक पुत्र तथा एक पुत्री, यही इनका परिवार था। इनकी पुत्री वासन्ती अत्यन्त बुद्धिमान तथा सदाचार सम्पन्न थी। अब वह बचपन से यौवन अवस्था को प्राप्त हो गई थी। दीनानाथ शर्मा उसी नगरमें अंग्रेजी विद्यालय में संस्कृत के अध्यापक थे। उनको 80 रु. मासिक वेतन मिलता था। उसी वेतन से वह परिवार रूपी गाड़ी जैसे-तैसे चलाते थे। पुत्र के दुराचार से उनका हृदय हमेशा दुःखी रहता था। पुत्री के विवाह काल को उचित समझकर वे वर खोजने में तत्पर हो गए। विवाह के बाद वर्तमान समय में उनके मन में सुख प्राप्त होगा कि नहीं, यही चिन्ता रात-दिन उसके हृदय में घूमती थी। पुत्र के दुराचार से दीनानाथ की पुत्री ही पुत्र-प्रेम के योग्य थी यानि पुत्र का वास्तविक प्यार अपनी पुत्री को ही देते थे। दीनानाथ शर्मा की भार्या नवीन आचरण से रहित, सरल स्वभाव से युक्त, एवं मधुर बोलने वाली थी जिस का नाम मनोरमा था। उसी के आचरण को वासन्ती भी पूर्णतया अपनाई थी। वसंत पहले माता के शिक्षा के द्वारा सुशील था। परन्तु बाद में दुष्टों के संसर्ग से वह कुमार्ग गामी हो गया। यही एक दुःख दीना नाथ शर्मा को था। इसके अभाव में उनका गृहस्थ सुवर्णमय होता!

धीरे-धीरे भगवान सूर्य अपने कान्ति को फैलाते हुए उदय हुए। प्रभात कालीन हवा भी अपने आवभाव से वर के समान पुष्प के सौरभ को लेकर लता-मण्डपों को मानों सन्देश दे रही हो। पूर्व दिशा में उसी समय सभी लोगों में उत्साह भरती हुई दानशील नारी के सामने पूर्व दिशा सुशोभित हुई। उसी समय दीना नाथ के घर मङ्गल ध्वनि प्रारम्भ हुई। उसी समय लोगों ने कहा : हम जान गए वासन्ती का विवाह है आज। इस प्रकार-अन्दर बाहर आते-जाते लोगों से दीना नाथ शर्मा का घर भरा हुआ था। सभी जगह आनन्द की लहर छाई हुई थी, परन्तु वासन्ती के पिता के अन्दर दुःख की लहर ही दिखाई दे रही थी। इस विवाह

उत्सव में बसन्त नहीं आया था। इसी कारण से वह पति-पत्नी दुःखी थे। न जाने वह कहाँ भाग गया था। वासन्ती के पति माधव नाथ सुशील, धनवान, रूप-गुण से सम्पन्न थे। वासन्ती उस भीड़ में कठिनाई से तथा स्वभाविक लज्जा के कारण अधोमुखी सखियों के द्वारा उनके गुणों को सुनकर अपने आपको धनवान समझती थी परन्तु कौन जानता था कि इस के विवाह का परिणाम पाश्चात्य में क्या होगा ?

अतः विवाह उत्सव समाप्त हो जाने पर कमल रूपी अपने नेत्रों में आंसू भर कर वासन्ती अत्यन्त कठिनाई से अपने माता-पिता को नमस्कार करके पति के घर चली गई। वासन्ती के चले जाने पर मनोरमा देवी बोली, हम लोगों के जीने का एक ही आधार था, वह भी चली गई। श्रेष्ठ पुत्र की तरह पीड़ा पीड़ित कर रही है। यह हम लोग ही जानते हैं। हाय ! हमारा दुर्भाग्य न जाने कैसे है ? हमारा पुत्र भी अत्यन्त दुष्ट है। उस पुत्र के द्वारा हम लोगों को कैसे सुख प्राप्त होगा ?

वासन्ती को पति गृह में दो वर्ष व्यतीत हो गए। इस प्रकार अपने सास-ससुर तथा बड़ों की सेवा एवं गृह कार्य में निपुण वासन्ती सुखपूर्वक समय का सदुपयोग करती थी। पति से भी वासन्ती अत्यधिक प्यार प्राप्त करती थी। कभी-कभी उसके हृदय में माता-पिता की स्मृति व्याकुल करती थी। परन्तु पति के अत्यधिक प्रेम के कारण माता-पिता की अधिक कष्टोत्पादिनी स्मृति नही होती थी। किन्तु वह सुख उसका निरन्तर कम होता चला, क्योंकि दुर्जन मित्रों के कुसंग से उसके पति का स्वभाव प्रतिदिन बदलता गया। क्योंकि वासन्ती के दुर्भाग्यवश माधव-नाथ शराब का आश्रय लेने लगा। कुछ दिन तो उसका यह कर्म गुप्त रहा किन्तु बुद्धिमान वासन्ती उसका सब कर्म जान गई। परन्तु पति के हृदय में दुःख होगा, इससे वह प्रत्यक्ष नहीं करती थी। वह अत्यधिक दुःख रूपी सागर में पड़ी हुई, पति को सन्मार्ग पर लाने के लिए वह रात-दिन प्रयत्न करती थी। एक दिन बहुत देर से आये हुए शराब पीने से इधर-उधर गिरते हुए माधव नाथ को देखकर शीघ्र ही वासन्ती उसको विस्तर पर लिटाकर पति के क्रोध की आशंका से धीरे-धीरे

पंखे से हवा करती हुए मधुर स्वर में बोली—हे स्वामी, आजकल आप यह कौन सा मार्ग अपनाये हैं जो कि अत्यन्त निंदनीय तथा त्याज्य है। वासन्ती के इस प्रकार के वाक्य सुनकर मानों अपना अपराध स्वीकार कर के माधव नाथ अपना सिर ऊपर उठाने के लिए समर्थ नहीं हुआ।

किन्तु शीघ्र ही अपनी विकारयुक्त अवस्था को त्याग कर गम्भीर स्वर में बोला : जो मैं करता हूँ ठीक ही करता हूँ, इसमें आपको बोलने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार बोल कर वह घर से बाहर कहीं चला गया तथा वासन्ती भी वहीं बैठ कर अश्रुपात को पोंछने लगी। "समान स्वभाव तथा समान दोष वाले व्यक्तियों से दोस्ती" इस न्याय से भाग्यवश माधवनाथ के दुष्टों की मण्डली में वसन्त के साथ शराब पीने की सभा में मित्रता हो गई। किन्तु बहिन अपमान करेगी, इस भय से वसन्त माधवनाथ के साथ कभी उनके घर में नहीं जाता था। एक दिन माधवनाथ बार-बार वासन्ती के द्वारा मना करने पर क्रोधपूर्वक बोला : पहले जाकर अपने भाई को रोको, पश्चात् मुझ को समझाना। ऐसा सुनकर "क्या वसन्त भी इन लोगों के साथ है" यह वासन्ती सोचने लगी और मौन धारण करके रहने लगी। इससे उसकी चिन्ता अत्यधिक बढ़ गई। धीरे-धीरे घर का सारा समान बिक गया तथा अलङ्कार (गहने) भी शराब पीने में बिक गये। दो दिन के घर में खाने को कुछ नहीं था, एक बूढ़ी दासी वासन्ती की इस दशा को देख कर वह अपने घर से कुछ खाने की वस्तु लाई। उस भोजन को वासन्ती ने बहुत कठिनाई से कुछ खाया, तथा माधवनाथ तो बहुत दिन से बाहर ही अपनी इच्छानुसार भोजन करता था। वसन्त के साथ माधवनाथ के दुर्व्यसन और बढ़ गये। हफ्ते में मुश्किल से एक दिन घर आते थे। माधवनाथ के इस समाचार को सुनकर पति-पत्नी दीनानाथ शर्मा अत्यन्त दुःखी हुए। पहलें से तो एक पुत्र का शोक था, दूसरा अब बेटी के दुर्भाग्य से उनका शोक अत्यधिक बढ़ गया। इस प्रकार वे दोनों कष्ट का अनुभव करते हुए तथा अपना गृहस्थ जीवन अन्धकारमय सोच कर सो गये। माधव ने भी दुर्व्यसन के द्वारा अपने को बहुत कमजोर बना दिया। ऐसा देख कर

वासन्ती को एक नई चिन्ता हो गई तथा शोक रूपी सागर में डूब गई। यद्यपि वासन्ती से वह शंकित था किन्तु धीरे-धीरे सत्य बोलने को उत्सुक दिखाई देता था। इस प्रकार माधव रोग रूपी शय्या पर सो गया। सदाचार परायण वासन्ती सम्पूर्ण कष्ट सहन करती थी परन्तु वह माधवनाथ न ही जानता था न ही विचार करता था। अपने अहंकार के कारण उसने कभी भी उसका आदर नहीं किया। वासन्ती भी सब कुछ सहन करती हुई कभी भी वाणी से, कर्म से तथा चेष्टा से उनका अनादर नहीं करती थी।

एक दिन वासन्ती नित्य क्रियाक्रम करके तथा माधवनाथ के उपचार करके घर के कार्य में संलग्न थी। माधव वासन्ती को इस प्रकार देखकर बोला, हे प्रिये ! इस प्रकार धीरे से बुलाया तथा वासन्ती भी निद्रा में जगी हुई की तरह उसको वैसा देखकर तथा उसका व्यवहार सुन कर आंसू से भरी हुई नेत्रों वाली उसके पलंग के पास आ करके मौन खड़ी हो गई। वह उसके बुलाने का उत्तर भी भूल गई थी। माधव उसको वैसा देखकर थोड़ी देर कुछ भी बोलने में समर्थ नहीं हुआ उसके बाद सिर उठा करके उसने उठने का प्रयत्न किया। वासन्ती ने शीघ्र ही उसके प्रयत्न को समझ करके उसको उठा कर बिठा दिया। उसके बाद माधव वासन्ती के हाथ को अपने रोग से अत्यन्त क्षीण, हाथ में रख करके नेत्रों में आंसू भर कर बोला—हे प्रिये ! मैंने बहुत अपराध किया है। मुझे क्षमा कर दो। आप जैसी घर की लक्ष्मी को मैंने दुराचार के द्वारा पैर से मारा है। मुझ को धिक्कार है। उसके पश्चात् वासन्ती बीच में रोक कर बोली —हे स्वामी, ऐसा मत बोलो, हम को नरक के मार्ग में जाने वाली नहीं बनाइये। ऐसा बोलकर वासन्ती अपना पल्लव रूपी कोमल हाथ उसके बदन पर फेरने लगी किन्तु वासन्ती ने अपनी कठिन तपस्या से भी रोग रूपी राक्षस से उसको नहीं बचा पाई। एक दिन रोती हुई वासन्ती को छोड़ कर माधवनाथ सदा के लिये चला गया।

वसन्त भी माधव के मरने का समाचार सुनकर अत्यन्त दुःखी हुआ। कुछ दिन के बाद वसन्त कुछ साहस भर कर अपनी बहन के घर

गया। वहां जाने पर पड़ोसियों से पता चला कि पति के मरणोपरान्त कुछ ही दिन के बाद वह कहीं चली गई। उसके बाद वसन्त दुःखी मन से अपने माता-पिता की सेवा करता हुआ तथा उनको आश्वासन देने के लिए, शीघ्र ही अपने माता-पिता के साथ तीर्थ यात्रा करने गया। पश्चात् वे क्रमशः हरिद्वार पहुँचे। वहाँ एक दिन गंगा के किनारे कोई योगिनी स्त्री आती हुई दिखाई दी तथा उसके समीप आने पर अच्छी प्रकार से देखकर शीघ्र वसन्त बोला, क्या तुम वासन्ती हो ? यह बात सुन करके वह भी वसन्त को देख करके बोली : क्या भाई वसन्त हो ? ऐसा कह कर उनके पैरों में गिर पड़ी। इसके बाद वसन्त उसकी अवस्था तथा वेश-भूषा देखकर बोला, यह क्या बनी हो बहन ? वासंती शीघ्र ही हंस कर बोली कौन-सा जीवधारी पकने को तैयार भाग्य के द्वार को बन्द करना चाहता है।

आठवाँ पाठ

मातङ्गदारिका परिव्राजनम्

कठिन शब्दों के अर्थ—

(1) **उदकम्** = पानी।
( ) **उद्धरतेस्म** = निकालती थी।
(3) **परित्यक्तम्** = त्याग किए हुए को।
(4) **उत्पादयति** = उत्पन्न करती है।
(5) **पर्युपासते** = आराधना करता है।
(6) **गोमयेन** = गोबर से।
(7) **दर्भान्** = कुशों (घास के) तिनकों को।
(8) **अर्कपुष्प** = आक के फूल को।
(9) **परिक्षिपति** = फेंकती है।
(10) **निवास्य** = धूनी देकर।
(11) **ददर्श** देखा।

(12) प्राविशत् = प्रविष्ट हुआ।

(13) एवमुक्ते = ऐसा कहने पर।

(14) अपहाय = छोड़ कर।

(15) अवोचत् = कहा।

हिन्दी में अनुवाद अथवा सप्रसंग व्याख्या —

एक समय में भगवान् बुद्ध श्रावस्ती में घूमते थे, जेतवन में अनाथों को पिण्ड देते थे। वहां पर प्रकृति नाम वाली मातङ्ग चाण्डाल कन्या उस तालाब से पानी निकालती थी। आयुष्मान आनन्द ने चांडाल कन्या को कहा : हे बहन, मुझे पीने योग्य पानी दो, मैं पिऊँगा। इस प्रकार के कहने पर मातङ्गदारिका ने आयुष्मान आनन्द को कहा : मैं एक मातङ्ग कन्य हूँ। हे मातङ्ग कहने वाली बहन, मैं तुम्हारी कुल और जाति को नहींपूछ रहा हूँ। अतः यह हृदय से हटाकर मुझे पीने योग्य पानी दो. मैं पिऊँगा। इसके बाद प्रकृति नामक चाण्डाल कन्या ने आनन्द को पीने योग्य पानी दिया। उसके बाद आयुष्मान आनन्द पानी को पीकर चला गया। इसके बाद चाण्डाल कन्या ने आयुष्मान आनन्द के शरीर में. मुँह में अच्छा व शोभन संकेत ग्रहण करके मन में (आवाज में) चाण्डाल योनि के विकार से चिन्तित हुई थी। आर्य आनन्द मेरे लिये आनन्द स्वामी हो। विद्याधरी मेरी माता है। वह आर्य आनाद को ला सकेगी।

इसके बाद चाण्डाल कन्या ने पानी के घड़े को लेकर चाण्डाल के घर के पास पहुँच कर एकान्त में घड़े को फैंक कर अपनी माता को कहा —जो निश्चय धारण कर आनन्द नामक बौद्ध महाश्रमण गौतम का उपासक है, उसको मैं पति रूप में चाहती हूँ। हे माता, उनको आने के लिये कहोगी ? उसने उसको कहा - पुत्री, मैं समर्थ हूँ ! आनन्द को लाने के लिये मृत्यु को रखकर जिसने वीतराग को धारण किया है और राजा प्रसेनजित कौशल बौद्ध गौतम की अतीव सेवा करते है, भजते हैं, उनकी उपासना करते हैं। यदि वह यह जान लेंगे तो इस से चाण्डाल कुल का अनर्थ ही होगा। गौतम बुद्ध वीतरागी हैं। सुना जाता है वीतराग के मन्त्र सभी मन्त्रों को तिरस्कृत करते हैं।

इस प्रकार सुन कर प्रकृति नामक मातङ्गदारिका ने अपनी माता को कहा माता गौतम बुद्ध के पास रहने वाले आनन्द को अगर प्राप्त न कर पाऊँगी तो जीना छोड़ दूंगी। उसकी प्राप्ति के लिये ही मैं जिऊँगी। पुत्री, नहीं अपने प्राणों का त्याग न करो। लाती हूँ बौद्ध आनन्द को।

इसके बाद प्रकृति की माता मातङ्गदारिका ने आँगन और घर गोबर से लीप डाले, वेदी को लीप कर, दर्भों को इकट्ठा कर अग्नि को जलाकर 800 अर्क फूलों को लेकर मन्त्रों को पढ़ती हुई एक-एक फूल को आग में फेंकती थी।

इसने दीर्घायु आनन्द के चित्त को विक्षिप्त किया। वह (आनन्द) बिहार के लिए निकल कर चाण्डाल के घर के पास घूमने लगा। दूर से ही दीर्घायु आनन्द को आते देखकर फिर से पुत्री प्रकृति को कहा, वह आनन्द आ रहा है उसका बिस्तर लगाओ।

इसके बाद मातङ्गदारिका प्रकृति प्रसन्न मन से दीर्घायु आनन्द को चारपाई पर देख रही थी। इसके बाद दीर्घायु आनन्द जिससे चाण्डाल घर को आ गया था। आकर वेदी के पास बैठ गया। एकान्त में बैठे हुए पुनः दीर्घायु आनन्द रोया, आँसुओं को पोंछता हुआ इस प्रकार कहने लगा— मैं पतन को प्राप्त हो चुका हूँ। न मुझे भगवान् मुक्त हीं करते हैं। इसके बाद दीर्घायु आनन्द को बुद्ध ने मुक्त किया। मुक्त करके अपने सम्बद्ध मन्त्रों द्वारा चाण्डाल के मन्त्रों को तिरस्कृत किया।

इसके बाद दीर्घायु आनन्द ने चाण्डाल के मन्त्र बन्धन से छूटकर अपने बिहार के पास घूमना शुरू कर दिया।

प्रकृति मातङ्गदारिका ने देखा कि दीर्घायु आनन्द जा रहे हैं। जाते हुए आनन्द को देखकर माता ने इस प्रकार कहा। पुत्री, चिंता मत करो। इसको गौतम बुद्ध ने बुलाया होगा। मेरे मन्त्र तिरस्कृत नहीं हो सकते हैं। प्रकृति ने कहा : माता, क्या गौतम बुद्ध के मन्त्र तुम्हारे मन्त्रों से बलवान हैं? पुत्री मन्त्र सब लोगों को प्रभावित करते हैं। परन्तु गौतम बुद्ध चाह कर भी नहीं कर सकते।

संसार में इतना सामर्थ्य किसी के पास भी नहीं है कि जो गौतम

बुद्ध के मन्त्रों को तिरस्कृत कर सकें । इस प्रकार गौतम बुद्ध के मन्त्र अत्यधिक बलवान् हैं । दीर्घायु आनन्द दोपहर से पहले चूनी लेकर भिक्षु का बर्तन, भिक्षु के कपड़े लेकर श्रावस्ती नामक नगरी में भोजन करने के लिये प्रविष्ट हो गये । दीर्घायु आनन्द के पीछे-पीछे प्रकृति छाया-सी लग गई । जब वह चलता था तो वह चलती थी । जब वह बैठता था तो वह बैठती थी । जिस-जिस कुल में भिक्षा के लिये जाता था उस-उस के द्वार पर चुप-चाप बैठती थी दीर्घायु आनन्द को बुलाती हुई ।

दीर्घायु आनन्द ने मातङ्गदारिका को पीछे-पीछे छाया की तरह आती हुई देखा, देखकर फिर से लज्जित होता हुआ अनाहरी किये जाते हुए रूप वाला दुःखी-दुःखी बुरे मन से जल्दी-जल्दी श्रावस्ती से निकल कर जेतवन के पास पहुँच गया । पहुँच कर भगवान् के चरणों में सिर को रखा (प्रणाम किया) । प्रणाम करके एकान्त में बैठ गया । एकान्त में बैठे हुए दीर्घायु आनन्द ने भगवान् को कहा - मेरे भगवान्, यह प्रकृति मातङ्गदारिका पीछे-पीछे आ रही है । मैं चलता हूँ तो वह चलती है । जब मैं बैठता हूँ तो वह भी बैठती है । जब-जब मैं भिक्षा के लिये नगर में प्रवेश करता हूँ उसके द्वार पर चुप होकर बैठती हूँ । मेरी रक्षा करो) मेरी रक्षा करो भगवान् ।

इस प्रकार कहने पर भगान् ने दीर्घायु को यह कहा मत डरो, मत डरो । इसके बाद भगवान् ने मातङ्गदारिका प्रकृति से पूछा : तुम आनन्द से क्या चाहती हो ? प्रकृति ने कहा : मैं भदन्त (आदर सूचक से पूछा) आनन्द को पति रूप में प्राप्त करना चाहती हूँ ।

इसके बाद भगवान् ने प्रकृति मातङ्गद्वारिका के माता-पिता को यह कहा, "आज्ञा दो तुम दोनों के द्वारा आनन्द के लिए प्रकृति मातङ्गदारिका है । उन दोनों ने कहा - हे भगवान् हमने आज्ञा दी है । भगवान् ने कहा · तुम दोनों प्रकृति को यहां छोड़ कर अपने घर चले जाओ ।

इसके बाद चाण्डाल कन्या प्रकृति के माता-पिता भगवान् के चरणों में सिर नवाकर भगवान् की तीन प्रदक्षिणा करके भगवान् के पास से चले गये ।

इसके बाद भगवान् ने मातङ्गदारिका (चाण्डाल कन्या) प्रकृति को कहा तुम भिक्षुणी बन जाओ, ब्रह्मचर्य की कल्पना करो।

इस प्रकार कहने पर चण्डाल कन्या प्रकृति ने अपना सिर मुण्डवा लिया और गेरुए वस्त्रों को धारण कर लिया।

तृतीय खण्ड

सामान्य अलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. संस्कृत गद्य शैली की विशेषताएं वर्णन करें।

उत्तर संस्कृत गद्य का प्रादुर्भाव हमें वेदों से ही मिलता है। जैसे-जैसे कालक्रम की गति बढ़ती गई, समयानुकूल गद्य की शैलियों का निरन्तर विकास होता गया और गद्य शैली सरल से कठिनता की ओर अग्रसर होती गई।

जैसे वैदिक गद्य की शैली लेखकों की प्रतिभा के अनुसार और समय की धारा के अनुसार रही, संस्कृत गद्य की लघु और बृहत् समास से युक्त और समास से सरलार्थक शैली भिन्न-भिन्न समय पर रही। जैसे दण्डी ने कहा --

'ओजः समास भूयस्तमेतद् गद्यस्य जीवितम्।" संस्कृत गद्य की लघु और वृहत् समास की बाहुल्यता से युक्त और समास से विहीन सरलार्थक शैली भिन्न-भिन्न समय पर रही। जैसे दण्डी ने कहा "ओजः समास भूयस्तमेतद् गद्यस्य जीवितम्" अर्थात् ओज गुण से युक्त तथा समास की बहुलता में काव्य के जीवन की कल्पना की जा सकती है। दण्डी के अनुसार सजीव गद्य समास से ही सम्भावित है। संस्कृत भाषा में गद्य का प्रारम्भ प्राचीनकाल से ही दृष्टिगोचर होता है।

गद्य की आधुनिक शैली भले ही अतीव सरल हो। परन्तु दण्डी और बाण, सुबन्धु के ग्रन्थों पर अगर हम दृष्टिपात करें तो गद्य की एक विलक्षण शैली का अस्तित्व हमें देखने को मिलता है।

दण्डी द्वारा रचित "दशकुमारचरित" गद्य काव्य पर जब हम शैली के दृष्टिकोण से दृष्टि डालते हैं तो एक आदर्श गद्य शैली का वर्णन हमें देखने को मिलता है। दण्डी की आदर्श गद्य शैली को देखकर किसी ने कहा था :

"दण्डि न: पदलालित्यम्"। दण्डी की शैली "दशकुमारचरित" में हमें प्राय: दो प्रकार से देखने को मिलती है। जैसे कहीं-कहीं पर ओजमयी शैली और कहीं-कहीं पर माधुर्यमयी गौड़ी रीति से युक्त शैली देखने को मिलती है। "दशकुमार" की शैली सरस, सुबोध, सहसा प्रभावशालिनी है।

दण्डी के बाद अगर सुबन्धु द्वारा रचित "वासवदत्ता" को देखते हैं तो हमें तब प्रत्येक शब्द श्लेषमय देखने को मिलता है। हम देखते हैं कि सुबन्धु की शैली सर्वत्र ओजमयी है।

संस्कृत गद्य को उभय रूप से सम्पन्न करने का कार्य बाणभट्ट ने किया। बाण के असीम पाण्डित्य को देखकर किसी ने कहा था बाणभट्ट सुबन्धु और दण्डी के बाद भी अनेकों गद्यकारों ने अपनी-अपनी रचनाओं का निर्माण किया परन्तु शैली की दृष्टि से वे अधिक उन्नत नहीं हो सके। आधुनिक समय में रचित अम्बिकादत्त व्यास का "शिवराज विजय" गद्य शैली के आदर्शत्व का ज्वलंत प्रमाण है।

'शिवराज विजय' में गद्य का प्रवाह निरन्तरता का है, शैली प्रवाह-मय, मधुर, सरल एवं कोमल है।

इस प्रकार हमें गद्य शैलियों की अनेक विशेषताएं कविगत प्रतिभा एवं गद्यकारों के काव्द के आधार पर देखने को मिलती हैं।

प्रश्न 2. गद्य काव्य तथा शैली का आरम्भ तथा विकास कैसे हुआ ?

उत्तर—संस्कृत साहित्य तीन प्रमुख भागों में विभक्त है : (1) गद्य, (2) पद्य, (3) चम्पू। संस्कृत साहित्य का अधिकतम भाग पद्यों में बंधा हुआ है फिर भी गद्य की प्रचुरता है ही। आज से हजारों वर्ष पूर्व वैदिक

काल में ही बोलचाल से लेकर लिखायी तक गद्य का प्रयोग होता था।

अपौरुषेय कहे जाने वाले वेदों में भी गद्य का, प्रचुर भाग हमें देखने को मिलता है। अथर्ववेद और यजुर्वेद में गद्य की मात्रा पद्य के बराबर है। संहिता ग्रन्थों में और उपनिषदों में भी गद्य की मात्रा अत्यधिक हमें देखने को मिलती है।

प्राचीनकाल की परिस्थितियों में गद्य काव्य की रचना कष्टप्रद थी। अतः इस ओर लेखकों का ध्यान नहीं गया यद्यपि आयुर्वेद, ज्योतिष, वैज्ञानिक ग्रन्थों में पद्य की उपेक्षा गद्य की मात्रा कम जरूर है फिर भी चिरकादि ग्रन्थों में गद्य की प्रचुरता है।

शैली का आरम्भ व विकास—

संस्कृत गद्य रचना करने वालों की कमी का कारण तत्कालीन समय में लेखनादि का और पाठ्य पुस्तकों का अभाव रहा। गद्य की महत्ता प्राचीन समय में अतीव थी। अतः कहा जाता था "गद्य कविनां निकषं वदति" गद्य शैली का विकास और आरम्भ हमें वेदों से ही प्राप्त होता है।

ऋतं च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत, ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोऽविदधि संवत्सरो उजायत. अहो रात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो, वशी। (ऋग्वेद का दशमण्डल)

इस गद्य की शैली भाषण के समान कठिन शब्दों से युक्त है। इसके बाद अर्थात् वैदिक काल के बाद के ग्रन्थों अर्थात् ब्राह्मण ग्रन्थों में गद्य की मात्रा अधिकतर है। वहां पर वैदिक गद्य की अपेक्षा सरल शैली व भाषा है। जैसे यदेतन्मण्डलं नयति इत्यादि इसके बाद उपनिषदों में गद्य की शैली कथा-उपकथा के रूप में है।

उपर्युक्त वैदिक गद्यों के उदाहरणों पर दृष्टिपात करने से हम देखेंगे कि गद्य की शैली क्रमिक रूप से सरलता की ओर अग्रसर हुई है। जैसे

वेदों की भाषा व्याकरण लक्षण च्युत (हीन) है । उसकी अपेक्षा ब्राह्मण ग्रन्थों की भाषा लक्षणशालिनी तथा स्पष्ट है । उपनिषदों की भाषा व्याकरणसम्मत है ।

लौकिक गद्य का प्रथम सूत्रपात निरुक्त में हमें देखने को मिलता है । संस्कृत गद्य में दण्डी, सुबन्धु और बाण के गद्य काव्य ग्रन्थ सुप्रसिद्ध हैं । इनके पूर्व के ग्रन्थों में शैली का वह विकास देखने को नहीं मिलता जो कादम्बरी या दशकुमारचरित में दिखाई पड़ता है । दण्डी, सुबन्धु व बाण के ग्रन्थ नीरस गद्य ग्रन्थ न हो कर गद्य काव्य हैं और पाठक के मन को उतना ही आनन्द प्रदान करते हैं जितना कि उच्च कोटि के काव्य ।

दण्डी, सुबन्धु तथा बाण के बाद संस्कृत गद्य साहित्य का उत्तरोत्तर विकास होता गया । 1596 में देव विजयगणी ने गद्य में रामचरित की रचना की ।

अठारहवीं-उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में संस्कृत गद्य को चालना देने के लिए अम्बिका दत्त विकास ने "शिवराज विजय" की रचना की ।

इसके बाद भी अनेक और गद्यकारों ने अपनी-अपनी प्रतिभा के अनुसार गद्य काव्य को विकसित किया जिसके अनेक प्रमाण हमें सम्प्रति (इस समय) भी दृष्टिगोचर होते हैं । इनकी शैलियां भी पूर्वकालीन ग्रन्थों के आधार पर ही आश्रित दिखती हैं ।

प्रश्न 3. संस्कृत गद्य रचना की विभिन्न शाखाएं तथा उनकी विशेषताएं वर्णन करें ।

उत्तर संस्कृत साहित्य का इतिहास विश्व के सभी साहित्यों से प्राचीनतम है । अनादिकाल से संस्कृत साहित्य की पावन धारा विभिन्न मार्गों में गुज़रती हुई आज हम तक इस वर्तमान रूप में देखने को मिलती है । गद्य रचना की अनेकों शाखाएं हैं । काल की परम्पराओं ने, कवियों की प्रतिभा ने इसे अपने अनुकूल बनाने का सर्वत्र प्रयत्न

किया है।

गद्य रचना की विभिन्न संस्कृत शाखाएं —

संस्कृत साहित्य को तीन भागों में विभक्त किया गया है, जैसे गद्य, पद्य, और चम्पू। संस्कृत साहित्य अधिकांश भाग पद्यों में समाया हुआ है। फिर भी पद्य की अपेक्षा गद्य किसी तरह से हमें प्राचीन ग्रन्थों में भी कम देखने को नहीं मिलता। विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ वेदों को माना जाता है। वेदों में पद्य की बहुलता अत्यधिक है फिर भी यजुर्वेद का अधिकांश भाग गद्यों में बंटा हुआ है। वेदों से ही गद्य की धारा फूटकर ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों और अन्य साहित्यिक और पौराणिक ग्रन्थों से बहती हुई अपने विभिन्न रचनात्मक रूपों को बदलती हुई आज हम तक पहुंची है।

आज के समय गद्य रचना की अनेकों शाखाएं हमें देखने को मिलती हैं।

(1) **कथा** प्राचीन समय से ही कथनात्मक गद्य रचना हमें देखने को मिलती है। अनेक गद्यकारों ने कल्पित अथवा रामायण, महाभारतादि के आधार पर गद्य रूप में कथा का निबन्धन किया है।

जैसे — सुबन्धु की वासवदत्ता इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

(2) आख्यायिका — गद्य रचना की यह भी एक शाखा है। आख्यायिका में अन्य ग्रन्थों से मुख्य भाग को लेकर लेखक अपनी प्रतिभा से उसे परिपोषित करता है। आख्यायिका के रूप में हमें बाण की कृति "हर्षचरितम्" देखने को मिलती है।

(3) निबन्ध—आधुनिक काल में संस्कृत के विद्वानों की ज्ञान दरिद्रता के कारण सुव्यवस्थित गद्य-पद्य की रचनाओं का आदर्शन लोप होने के कारण गद्य रचना की निबन्धात्मक शाखा का आविर्भाव हुआ है। इस शाखा में किसी एक सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक, शैक्षिक विषय को लेकर उसका प्रतिपादन लेखक अपनी प्रतिभा से करता है।

(4) उपन्यास — गद्य रचना की विभिन्न शाखाओं में उपन्यास में गद्य

रचना का अपना विशेष महत्त्व है। उपन्यासों में कवि अपनी कल्पित कथा को अपनी प्रतिभा से प्रतिपादित करता है।

(5) विशेषताएं—संस्कृत गद्य रचना का इतिहास सुदूर प्राचीनकाल से माना जाता है। आज हम संस्कृत गद्य को दो भागों में विभक्त करते हैं : अलौकिक तथा लौकिक।

(6) अलौकिक—गद्य प्राचीनतम ग्रन्थों में जैसे वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषदों में निबद्ध गद्य रचनाओं को अलौकिक गद्य में समाविष्ट किया जाता है। अलौकिक पद्य की विशेषताएं अपने आप में गद्य की अभूतपूर्व स्थित हैं। वैदिक गद्य की विशेषताएं इस प्रकार थीं।

(1) वैदिक गद्य में व्याकरण नियमों का कठिनता (कठोरता) से पालन नहीं हुआ।

(2) वैदिक भाषा शैली का प्रवाह प्रौढ़ता से परिपूर्ण है।

(3) वैदिक गद्यों में उत्तरोत्तर शैलियों में सरलता का आविर्भाव हुआ है।

(7) लौकिक—आधुनिक गद्य इन गद्यों के आधार पर ही आश्रित हैं। लौकिक गद्य में शैली, रीति, समास, अलंकारों आदि का विशेष महत्त्व दिया गया है।

लौकिक गद्य की विशेषताएं—

(1) अलंकारों का सुनियोजित बन्धन।
(2) भाषा और शैली पर अत्यधिक ध्यान।
(3) व्याकरण के नियमों का कठोरता से पालन।
(4) रोचकता का समावेश।

इस प्रकार हमें गद्य रचना की विभिन्न शाखाओं का प्रमुखता से दर्शन होता है। इसके अतिरिक्त भी गद्य रचना की विभिन्न शाखाएं हो सकती हैं।

प्रत्येक गद्य रचना के गद्यों की विशेशताएं अपने आप में मौलिक एवं सारगर्भित हैं। उस पर सरस कवि ही दृष्टिपात कर सकता है।

प्रश्न 4. संकलित पाठों के लेखकों का परिचय दीजिए।

उत्तर – दण्डी—संस्कृत गद्य साहित्य क्षेत्र में सूर्य की भांति चकासमान महामहिम दण्डी हैं। महान पंडित दण्डी के विषय में प्रस्तुत श्लोक में उनके अपूर्व पाण्डित्य का वर्णन है। 'जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यामिधाऽभवत कवि इति ततो व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि।' प्राचीन कालीन गद्यकारों में दण्डी का सर्वोत्कृष्ट स्थान हमें देखने को मिलता है।

दण्डी का समय दण्डी का कौन-सा समय है? इस विषय में विद्वानों में ऐक्यमत्य नहीं है फिर भी कुछ निम्न ग्रन्थों के प्रमाणों के आधार पर दण्डी का समय सातवीं शताब्दी माना जाता है। जैसे—

दसवीं शती में जन्मे अभिनव गुप्त ने अपनी 'लोचन' में दण्डी का उल्लेख किया है। इसी प्रकार वामन ने अपने "काव्यालंकार" सूत्र में जो रीतियां काव्यात्मक रूप में वर्णित की हैं उनका प्रतिपादन दण्डी ने भी किया है। इस आधार पर कहा जाता हैं कि दण्डी का काल वामन से पूर्व है।

काव्यदर्श में वर्णित राजा रतवर्मण का उल्लेख पल्लव नरेश को बोधित करता है।

"वराहेगोद्धृता यामो वराहेरूपरिस्थिता।" यहां पर [वराहपद से चालुक्य वंश के राजाओं का बोध होता है। इन सभी प्रमाणों के अध्ययन से हमें पता चलता है कि दण्डी का समय सप्तम शती के अन्त का होगा।

दण्डी को दक्षिणात्य निवासी माना जाता है।

दण्डी की कृति व विशेषताएं दण्डी ने गौरवरूप गद्य दशकुमारचरित लिखा है। इस ग्रन्थ के अन्दर दश कुमारों का वर्णन है। इस ग्रन्थ की शैली सुबोध, सहसा प्रवाहशालिनी है। दशकुमार में नातीव समास है, नाहि श्लेष की अत्यधिक बन्धनता है।

दशकुमारचरित के अलावा दण्डी के अन्य ग्रन्थ "अवन्ति सुन्दरी कथा" भी गद्य रूप में ही हमें देखने को मिलती है। दण्डी की यह रचना मौलिक है। यह ग्रन्थ पूर्ण रूप से आज उपलब्ध नहीं है।

सुबन्धु—संस्कृत गद्य साहित्य के चूडामणि लौकिक रूप के गद्य

काव्य के आद्य रचियता महामहिम सुबन्धु को कहा जाता है।

सुबन्धु का समय— सुबन्धु के समय के विषय में विद्वानों में ऐकमत्य नहीं हैं।

(1) सुबन्धु के "वासवदत्ता" ग्रन्थ में प्राप्त श्लोक है—

"सारसवत्ता विहता नवका विलसन्ति चरतिनो कङ्क।
सरसीव कीर्तिशेषं गतवति भुविविक्रमादित्यो ॥

इस श्लोक के आधार पर विक्रमादित्य से सुबन्धु के सम्बन्ध का पता चलता है। परन्तु कौन विक्रमादित्य ? इस विषय में अनेक आलोचक मिहिरकुल नाम के हूणराज को पराजित करने वाले यशोधर्मा को ही विक्रमादित्य मानते हैं। यशोधर्मा का काल छठी शताब्दी का मध्य माना जाता है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि सुबन्धु का समय भी छठी शती का पूर्वभाग रहा होगा।

(2) बाणभट्ट ने सुबन्धु की कथा को "धियानिबद्धेयमतिद्वयी कथा" के रूप में स्मरण किया है। अत: बाण से पूर्व ही सुबन्धु का काल है। अत: सुबन्धु का काल छठी शती से पूर्व का रहा होगा।

(3) सुबन्धु ने वासवदत्ता में श्लेष द्वारा उद्योतकर का स्मरण किया हैं। उद्योतकर का समय भी छठी शती माना जाता है। अत: सभी प्रमाणों के आधार पर सुबन्धु का समय षष्ठ शताब्दी ही माना जाता है।

सुबन्धु की कृति—सुबन्धु की एक ही कृति हमें दृष्टिगोचर होती है, वह है "वासवदता"। इस ग्रन्थ में श्लेष का गुम्फन अतीव सुरेख है। 'प्रत्यक्षरं श्लेषमयं' की सुबन्धु प्रतिज्ञा हमें यहां देखने को मिलती है।

वासवदत्ता की प्रशंसा करते हुए बाणभट्ट ने एक स्थान पर कहा है :

"कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया ॥
शक्त्येव पाण्डु पुत्राणां नूनं वासवदत्तया ॥

शब्द और अर्थालंकारों का जिस प्रकार शानदार वर्णन हमें यहां देखने को मिलता है वैसा अन्य कहीं पर भी हमें दृष्टिगोचर नहीं होता।

बाण—संस्कृत गद्य धारा में अपना अपूर्व योगदान देने वालों में महामहिम बाण का स्थान सर्वोच्च है।

बाण का समय—प्राचीन चीनी यात्री ह्वेनत्सांग ने 629 से 645 ईसा तक भारत का भ्रमण किया। उसने अपने यात्रा वर्णन के प्रसङ्ग में 606 ईसा से लेकर 648 पर्यन्त महाराज हर्षवर्धन का थानेश्वर पर राज करने का सविस्तार वर्णन किया है। इस आधार पर कहा जाता है कि बाण का समय यही होना चाहिए। अतः बाण का समय प्रायः सप्तम शती माना जाता है।

बाण भट्ट के वंश का नाम वात्स्यायन वंश था। इसके पूर्वज बिहार प्रान्त में महानदी के तट पर प्रीतिकूट नाम के गांव में रहा करते थे। बाण के पिता का नाम चित्तभानुः और माता का नाम राज्यदेवी था। बाण ने हर्षचरित में अपने वंश का विस्तृत वर्णन किया है।

महामहिम बाण की कृतियां - प्रामाणिक रूप से हमें बाण के दो ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं: (i) हर्षचरितम् (ii) कादम्बरी।

हर्षचरित केवल एक आख्यायिका ग्रन्थ न होकर सरस काव्य रूप में स्थित है। वर्णनों में सजीवता का परिपाक अतीव सुन्दर रीति से किया गया है।

इस ग्रन्थ में अष्ट उच्छ्वास हैं। तीन में बाण ने स्वकीय कथा लिखी है। चौथे से सातवें तक हर्ष चरित का वर्णन किया है। इस ग्रन्थ में हर्ष के सम्पूर्ण चरित का उल्लेख किया गया है।

कादम्बरी – बाण का द्वितीय महत्वपूर्ण गद्य ग्रन्थ कादम्बरी के रूप में देखने को मिलता है। स्वयं बाण ने कादम्बरी के विषय में कहा है: धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा।

कादम्बरी का मूल कथा गुणाढ्य द्वारा रचित वृहत्कथा से ली गई है। कादम्बरी में तीन जन्मों की कथाओं का गुम्फन हमें देखने को मिलता है। कादम्बरी के पात्रों का चित्रण बाण ने अतीव सुन्दरतापूर्वक किया है।

बाण की कादम्बरी में अलंकारों का वर्णन बहुत ही अच्छी

प्रकार से किया गया है। शब्दालंकारों का और अर्थालंकारों का गुम्फन अतीव उच्च प्रकार का है।

कादम्बरी में न केवल साहित्यिक परिपाक ही है अपितु उच्च आदर्श, न्याय और दर्शनों आदि का वर्णन है। शुकनासोपदेश में बाण के प्रकाण्ड राज्य पाण्डित्य का वर्णन हमें दृष्टिगोचर होता है अन्त में गोवर्द्धन के शब्दों में हम बाण का स्मरण करते हैं:

जाता शिखण्डिनो प्राग्यथा शिखंडी तथाऽवगच्छामि।
प्रगल्भ्यमधिक प्राप्तुं वाणी वाणो बभूवेति॥

श्री बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते - आधुनिक गद्यकारों में अग्रणीय श्री बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड विद्वान हैं। श्री बटुकनाथ जी वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय के प्राध्यापक के रूप में कार्य कर चुके हैं। श्री खिस्ते की साहित्य क्षेत्र में अत्यधिक रुचि है। संस्कृतानुरागी श्री खिस्ते के आधुनिक भारत में संस्कृत प्रचार एवं प्रसार का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

गद्य संग्रह में प्रस्तुत 'वासन्ती' के आधार पर इनके प्रकाण्ड पाण्डित्य का वर्णन हमें देखने को मिलता है।

श्री खिस्ते की शैली प्रवाहपूर्ण एवं सरलता से युक्त है। समास से विहीन माधुर्य गुण में निबद्ध भाषा का गुम्फन अतीव सुरेख है। यथावसर स्थानों में अलंकारों का गुम्फन भी अतीव सुन्दरता से किया गया है।

शिवराज विजय ग्रन्थ में महामहिम व्यास ने शिवाजी के जीवन चरित्र पर प्रकाश डाला है। शिवराज विजय तीन भागों में विभक्त है और इसमें 12 निश्वास हैं।

शिवराज विजय के पात्रों का चयन और समधुर भाषा का गुम्फन पाठक को अनायास ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है।

भाषा की सजीवता और प्राकृतिक दृश्यों का यथावत वर्णन व्यास की एक विशेष कला को बोधित करता है।

अम्बिकादत्त व्यास कट्टर धर्मानुरागी थे। इन्होंने ही अविजेय महर्षि दयानन्द को शास्त्रार्थ में शिकस्त दी थी।

अम्बिका दत्त व्यास – 18वीं शती के प्रकाण्ड संस्कृत साहित्यज्ञ श्री अम्बिका दत्त व्यास का नाम आधुनिक गद्य लेखकों में सर्वोपरि है। व्यास जी का स्थिति काल 1858 से 1900 तक है। अम्बिका दत्त व्यास के पूर्वज जयपुर (राजस्थान) के रहने वाले थे। इनके पिता काशी में आकर बस गए। इनका अध्ययन काशी में ही सुसम्पन्न हुआ। इनकी साहित्य में गहरी रुचि थी। व्यास जी एक घंटे में सौ श्लोकों तक की रचना करते थे। अम्बिका दत्त व्यास ने छोटे-बड़े मिलाकर 78 ग्रन्थों का निर्माण किया।

शिवराज विजय संस्कृत साहित्य के प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास का श्रेय शिवराज विजय को जाता है। शिवराज विजय में हमें अनुपम वाक्य विन्यास एवं अलंकारों का सुन्दर प्रयोग देखने को मिलता है।

शिवराज विजय का स्वरूप पाश्चात्य उपन्यासों की तरह है।

प्रश्न 5. संकलित पाठों का सार वर्णन करें।

उत्तर – (क) **आचार्य अनुशासन** प्रस्तुत पाठांश तैत्तिरीय उपनिषद में से लिया गया है। प्रस्तुत पद्य में गुरु द्वारा शिष्य के प्रति समावर्तन संस्कार में दिए जाने वाले उपदेशों का उल्लेख है।

संसार में किस प्रकार रहना चाहिए, किस प्रकार के कार्यों को नहीं करना चाहिए। इसमें व्यक्तिगत आचरण सम्बन्धी महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया गया है। जैसे सत्याचरण, धर्माचरण, प्रवचन, सुकृत्याचरण, अपनी उन्नति के लिए सतत प्रयत्न, दान, माता-पिता, गुरु की सेवा तथा देव-पितृ कार्यों के प्रति अपने-अपने कर्त्तव्यों का उल्लेख किया गया है।

(भाग ख)

आत्मोन्नत्यैंजपः

असत्य से सत्य की ओर चलो।

अन्धकार से प्रकाश की ओर चलो।

मृत्यु से अमृत की ओर चलो।

2. सुदर्शनम् तडाकम्

प्रस्तुत गद्यांश जूनागढ़ नगर की एक शिला पर खुदा हुआ था। इस शिला-लेख को रुद्रदामन ने शक सम्वत् 72 में अर्थात् 150 ईसा में खुदवाया था। प्रस्तुत गद्य में सुदर्शन झील के बांध के टूटने पर उस की मरम्मत का विवरण है।

इस झील का निर्माण मौर्य चन्द्रगुप्त की आज्ञा से प्रान्तीय शासक पुष्य गुप्त ने किया था और नहरें आदि निकलवाई थी।

इस गद्यांश मे महाक्षत्रप्रस्त उपाधिधारी रुद्रदामन राजा की शौर्य गाथा का बिस्तृत वर्णन है। उनके शौर्य एवं उनकी बुद्धिमता पर इस गद्यांश में प्रकाश डाला गया है।

चन्द्रगुप्त द्वारा निर्मित यह सुदर्शन झील 72वें रुद्रदामन् के शासन काल में सुवर्णसिक्ता और पलाशिनी नदी में बाढ़ आने से टूट गई थी।

इस सुदर्शन झील का लोगों के कल्याण के लिये रुद्रदामन ने पुनः निर्माण करवाया था।

इस निर्माण कथा को और रुद्रदामन की शौर्य गाथा का मनोहर वर्णन इस गद्यांश में किया गया है।

— . — —

3. आदर्श गृहिणी

प्रस्तुत पद्यांश दण्डी द्वारा रचित "दशकुमारचरितम्" से लिया गया है।

इस गद्यांश में एक आदर्श गृहिणी का वर्णन महामहिम् दण्डी ने किया है।

इस कथा में एक नवयुवक आदर्श बुद्धिमान पत्नी की खोज में ज्योतिषी का वेश धारण करके अपने पल्लु में मुंजी को बांधकर देशाटन को चल पड़ता है। देशाटन के समय वह एक युवती से प्रभावित होता है। उस युवती ने इस ज्योतिषी वेशधारी की मुंजी को एक योग्य प्रकार से पकाया। उसी मुंजी से ही अपनी कार्यकुशलता से ठीक कराकर धो

आदि मंगवाया और सुपाच्य भोजन उससे बनाकर उसको भोजन से सन्तुष्ट किया था। वह युवक उस युवती में आदर्श पत्नी के गुण देखता है जैसे—अकृत्रिम अर्थात् प्राकृतिक सुन्दरता, अत्यअल्प धन में सुस्वाद भोजन का निर्माण, पाक कला में निपुणता, गृह प्रबन्ध में कुशलता, परिवारजनों पर उदारतापूर्वक नियन्त्रण रखने की क्षमता तथा पति की आवश्यकताओं की शीघ्र पूर्ति और ध्यान रखने की भावना यादि गुणों का होना।

इन गुणों को देखकर उस युवक ने इस आदर्श गृहिणी से स्वयंवर किया और उसे अपने धर्म, अर्थ, काम में सहभागी बनाया।

---

4. शुकनासोपदेश:

प्रस्तुत पद्यांश इस पुस्तक में 'कादम्बरी' के शुकनासोपदेश में से लिया गया है - इसके रचयिता बाणभट्ट हैं।

प्रस्तुत पद्यांश में शुकानस नामक बूढ़े मन्त्री का नवनियुक्त राजा चन्द्रपीड़ के राज्याभिषेक के समय दिया गया उपदेश निहित है।

इस उपदेश में शुकनास ने अपने अनुभवों द्वारा राजभट्ट का एवं राजलक्ष्मी आदि का वर्णन समुचित रूप से किया है।

इस गद्यांश में कवि ने शुकनास और चन्द्रपीड़ के माध्यम से अभिनव यौवन एवं ऐश्वर्यमद से होने वाले उच्छृङ्खलता, निरंकुशता एवं शास्त्र और लोकमर्यादाओं का उल्लंघन आदि स्वाभाविक दोषों का यथार्थ चित्रण करके वस्तुतः एक सार्वभौम तथ्य का प्रतिपादन किया है।

शुकनास ने राजाओं और लक्ष्मी सम्पन्न लोगों को धूर्तों के चंगुल से बचने की चेतावनी दी है जो उल्टे-सीधे ढंगों द्वारा सदा अपना उल्लू सीधा करने में लगे रहते है। विषय वासनाओं से इन्द्रियों को रोकने की आवश्यकता शुकनास ने बड़े अधिकारपूर्ण ढंग से जोर देकर समझाई है।

अपने पिता द्वारा अर्जित राजलक्ष्मी को किस प्रकार सुरक्षित रखा जाए, पुरुष में किन-किन गुणों का होना अनिवार्य है, राजा किस

प्रकार का हो उसके क्या कर्त्तव्य होने चाहिएं, इन सब बातों का कथन
शुकनासोपदेश में निहित है।

---

5. वसन्त वर्णनम्

"वसन्त वर्णनम्" प्रस्तुत पद्यांश सुबन्धु द्वारा रचित "वासवदत्ता"
नामक गद्य से लिया गया है।
प्रस्तुत गद्यांश में महामहिम सुबन्धु ने वसन्त ऋतु का अति मनोहर
रूप से वर्णन किया है। इसके गद्यांश की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें
श्लेषालंकार में उपमालंकार का समायोजन बहुत ही सुन्दरता से किया गया
है। वसन्त समय में आने वाली आम की मञ्जरियों का वर्णन भौरों की
झन-झन आवाज का वर्णन और विविध पुष्पों का वर्णन और इन सब
वसन्तऋतोपकर्षक बातों का मनुष्य के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है
इन सब का वर्णन प्रस्तुत "वसन्त वर्णनम्" पाठ में किया गया है।

---

6. शिव वीरस्य राष्ट्रचिन्तनम्

प्रस्तुत गद्यांश अम्बिकादत्तव्यास प्रणीत शिवराज विजय नामक ग्रन्थ
से लिया गया है।
इस प्रस्तुत पाठ में महाराष्ट्र के राजा शिवाजी की अपने राष्ट्र के
प्रति चिन्ता को दर्शाया गया है। जब शिवाजी को औरंगजेब ने छल से
बन्दी बनाया था उस समय अपने देश की चिन्ता शिवाजी को सता
रही थी।
शिवाजी को जेल से बाहर निकालने के लिये उनका एक सेवक
राघवाचार्य मुसलमान फकीर का वेश बनाकर शिवाजी के पास आता है।
राघवाचार्य शिवाजी को अपने साथ चलने को कहता है और मार्ग में
आने वाली विभिन्न बाधाओं का निराकरण किस प्रकार से किया गया
है, किस प्रकार सुरक्षा की व्यवस्था हमने की है, इन सब बातों का
विवरण वह शिवाजी को देता है और अपने साथ महाराष्ट्र के नरेश

शिवाजी को लेकर कारागृह से बाहर आना है।

इस कथानक को महामहिम अम्बिकादत्तव्यास ने अपनी प्रतिभा से अत्यन्त खूबी से सजाया हुआ है। अलंकारों का यथोचित समावेश और सरल मनोहारिणी भाषा का प्रभाव सहृदय पाठकों के मन को सहसा ही आकृष्ट कर देता है।

प्रस्तुत गद्यांश में राजा और उसके प्रजा के प्रति कर्तव्य तथा सेवक और उसके स्वामी के प्रति कर्तव्यों को अत्यधिक सुगमता से वर्णित किया गया है।

---

7. वासन्ती

आधुनिक गद्यकारों में सर्वश्रेष्ठ श्री बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते ने इस 'वासन्ती' नाम की कहानी में एक पारिवारिक वातावरण बहुत ही अच्छी प्रकार से संजोया हुआ है। दीनानाथ शर्मा की दो सन्तानें थीं, एक पुत्र और एक पुत्री। पुत्र का नाम था वसन्त और पुत्री का नाम था वासन्ती। वासन्ती बहुत ही बुद्धिमान्, सदाचारी एवं दयालु युवती थी। अपने माता-पिता की वह हर समय सेवा करती थी।

इसके विपरीत वासन्ती का भाई वसन्त दुर्जन सङ्गति में फंस कर रह गया था। वह माता-पिता का निरादर करता था और घर से हमेशा दूर ही रहा करता था।

दीनानाथ शर्मा को सदैव अपने पुत्र की चिन्ता सताती थी और अपने गृहस्थ जीवन को सदा दुःखी देखते थे।

वासन्ती का विवाह माधवनाथ से हुआ। माधवनाथ सुशील, धनवान्, रूप गुणों से सम्पन्न था।

विवाह के दो वर्षोपरान्त वासन्ती का पति माधवनाथ बुरी संगत में फंस गया और शराब आदि पीने लगा। वासन्ती दुःखी हुई।

इन बुरी आदतों वश माधवनाथ बीमार पड़ गए और एक दिन उनकी मृत्यु हो गई। इसके बाद वासन्ती ने अपना घर छोड़ दिया और कहीं अन्यत्र चली गई।

एक दिन वसन्त जब तीर्थाटन के लिए हरिद्वार गया था तब योगिनी के वेष में अपनी बहन वासन्ती के दर्शन वसन्त को होते हैं।

इस प्रकार की कथा का गुम्फन या वर्णन श्री बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते ने अपनी पुस्तक में बहुत ही अच्छी प्रकार से किया है।

प्रस्तुत कथा में भाषा का प्रवाह सरल एवं मधुरतम है। अलंकारों का भी प्रयोग हमें अच्छी प्रकार से देखने को मिलता है।

---

8. मातङ्दारिका परिव्राजनम्

"मातङ्गदारिका परिव्राजनम्" कथाश दिव्यानन्द द्वारा रचित "शार्दूलकर्णावदानत" ग्रन्थ से लिया गया है।

इस कथा में मातङ्ग कन्या प्रकृति की गौतमबुद्ध के शिष्य आनन्द के प्रति आसक्ति का वर्णन किया गया है।

कथानक इस प्रकार है।

एक बार जेतवन में मातङ्गकन्या प्रकृति कुएं पर पानी भर रही थी कि उस समय पानी पीने हेतु आनन्द आता है। प्रकृति आनंद को देखकर उस पर मोहित हो जाती है और वह अपनी माता से उसको अपने लिए वर के रूप में मांगती है। प्रकृति की माता तान्त्रिक मन्त्रों से गौतम शिष्य आनन्द को अपने घर बुला लेती हैं और अपनी पुत्री प्रकृति को देखती है। इधर गौतम बुद्ध अपने शिष्य को इस तान्त्रिक माया से मुक्त कर देते हैं। आनन्द पुनः आश्रम में लौट आता है। आनन्द के पीछे-पीछे प्रकृति और उसके माता-पिता भी चले आते है। गौतम बुद्ध को आनन्द कहता है : भगवान्, मेरी रक्षा करो। तब गौतम बुद्ध प्रकृति के माता-पिता को कहते हैं, "क्या आप प्रकृति को आनन्द के लिए देना चाहते हो ?" प्रकृति के माता-पिता हाँ कर देते हैं तो भगवान् कहते हैं कि प्रकृति को यहां छोड़ कर चले जाओ। गौतम बुद्ध की आज्ञानुसार वे

प्रकृति को वहीं छोड़कर चले जाते हैं। तब बुद्ध प्रकृति को भिक्षुणी बन जाने का उपदेश देते हैं और उसका सिर मुंडवा करके गेरुएं वस्त्र पहनाते हैं।

चतुर्थ खण्ड

हिंदी से संस्कृत में अनुवाद करें।

प्रश्न 1.

उत्तर - (1) आचार्य शिष्य को वेद पढ़ाकर अन्त में उपदेश देते हैं सच बोलना, धर्म पर चलना, प्रमादवश स्वाध्याय मत छोड़ना। आचार्य को प्रिय धन लाते रहना जिससे सन्तान परम्परा बनी रहे। सत्य में, मङ्गल कार्य में ऐश्वर्यप्रद कार्य में तथा पढ़ने-पढ़ाने में प्रमाद मत करना।

संस्कृत में अनुवाद—

आचार्य वेदमनूच्य अन्तेवासिनमनुशास्ति—सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायान्माप्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सी। भूत्यै न प्रमदितव्यम्।

(2) **हिंदी गद्यांश** - एक समय राजा दिलीप ने अश्वमेध यज्ञ करने के लिए एक घोड़ा छोड़ा। उसकी रक्षा का भार रघु पर पड़ा। वह घोड़े के पीछे-पीछे चला। इन्द्र ने इस डर से कि 'सौ यज्ञ करके दिलीप मेरा पद लेगा' छिप कर उस घोड़े को चुरा लिया। नन्दिनी की कृपा से रघु को यह बात विदित हुई और पहले उसने साम नीति के अनुसार देवेन्द्र से वह घोड़ा मांगा। घोड़ा न मिलने पर रघु ने देवेन्द्र के साथ युद्ध आरम्भ किया।

संस्कृत अनुवाद —

एकदा राजा दिलीपोऽश्वमेधयज्ञं कर्तुमश्वमेकं मुमोच। तस्य रक्षितृत्वेन नियुक्तो रघुस्तमनुययौ।

"दिलीपः शतं यज्ञान विधाय पदवीं ग्रहीष्यति" इति भयेन प्रच्छन्न-

त्यो देवेन्द्रस्तं वाजिनमपजहार । नन्दिनीप्रासादाद् विदितवृत्तो रघु प्रथमं साम्ना देवेन्द्रमश्वं ययाचे । अनुपलब्धेऽश्वे तेन सह योद्धुं प्रववृते।

पंचम खण्ड

प्रश्न स्वपठित संस्कृत गद्यांश का हिन्दी में अनुवाद करें :

उत्तर - संस्कृत गद्यांश ततस्तया वृद्धा दासी साकूतमालोकिता । तस्यहस्तात् प्रस्थमात्रं धान्यमादाय क्वचिद लिन्दोद्देशे सुसिक्त संमृष्टेदत्त-पादशौचमुपावेशयत । सा कन्या तान् गन्धशालीन संक्षुद्य मात्रया विशोष्यातपं मुहमुहुः परिवर्त्य स्थिर समायां भूमौ नाली पृष्ठेन मृदु-मृदु घट्टयन्ती तुषैरखण्डैस्तण्डुलान्पृथक्चकार । जगाद च धात्रीम् मातः एभिस्तुषैरर्थिनो भूषण मृजा क्रियाक्षमैः स्वर्णकाराः तेभ्यः इमान्दत्वा लब्धभिः काकिणीभिः स्थिराल्यनत्याद्राणि नातिशुष्काणि काष्ठानि मितपचां स्थालीमुभं शरावे चाहर' इति ।

हिंदी में अनुवाद -

तब उसने एक बूढ़ी (दासी) नौकरानी को अभिप्राय के साथ देखा । उसके हाथ से प्रस्थ भर दान लेकर दरबान के पास के स्थान को भली भांति पानी से तर और साफ कर, पैर धोने का पानी देकर बिठाया । उस कन्या ने उन सुगन्धित मुन्जियों को मलकर धूप में सीमित रूप से सुखा कर धीरे-धीरे उलट पुलट कर कड़ी और समतल जमीन पर मूसल के नीचे के भाग से हल्के हाथों कूटती हुई बिना टूटी भूसी के साथ चावल अलग कर लिए । फिर धाय' से बोली माता, ये भूसी गहनों को साफ करने में समर्थ है । स्वर्णकार इसके ग्राहक हैं । उन्हें यह देकर काकिणीयां न अधिक कठोर और न अधिक गीली और न सूखी कम चीज पकाने लायक हांडी और दो कटोरे ले आओ ।

(2) संस्कृत गद्यांश - अपरे तु स्वार्थं निष्पादनपरैर्धनपिशित ग्रासगृध्रैरास्थाननलनी धूर्त बकैर्धूतं विनोद इति, परदाराभिगमनं वैदग्ध्यमिति स्वदारपरित्यागमव्यसनितेति गुरुवचनावीधरणमपरप्रणे-यत्वमिति स्वच्छन्दतां प्रभुत्वमिति, तरलतामुत्साह इति, अविशेषज्ञतामप-क्षपातित्वमिति, स्वयमपि विहसद्भिः प्रतारशकुशलैर्धूतैरमानुष्य—

लौकोचिताभिः स्तुतिभिः प्रतार्यमाणा वित्तमदमत्तचित्ता निश्चेतनता तथैवेत्यात्मन्यारोपितालिकाभिमाना-मर्त्यधर्माणोऽपि दिव्यांशावतीर्णमिव चेष्टानुभावाः सर्वजनस्योपहास्यतामुपयान्ति ।

हिन्दी में अनुवाद—

दूसरे अन्य राजा तो स्वार्थ साधन में तत्पर धन रूपी मांस भक्षण करने में सरीसे, राजभवन रूपी कमल बन में बगुले के समान, अन्दर ही अन्दर स्वयं भी राजाओं का उपहास करने वाले धूर्तों द्वारा जुआ मनोरञ्जन है। पर-स्त्री-गमन चतुरता है। अपनी स्त्री के त्याग में विरक्त होना है। गुरुओं के वचनों का उल्लंघन करना परवशता का न होना है। मनमानी करना प्रभुता है। चञ्चलता उत्साह है। विशेषज्ञ न होना पक्षपात से रहितता है। इस प्रकार कुशल धूर्तों द्वारा अलौकिक जनों के ही उपयुक्त स्तोत्रों द्वारा ठगे जाते हुए, धन के घमण्ड से मतवाले, सुध-बुध न होने के कारण "ऐसा ही है" इस प्रकार मिथ्याभिमान करने वाले मरणशील होते हुए भी अपने मन में मानों दिव्य अंश के अवतार को मानों देवत्व को प्रारम्भ करने वाले सब लोगों के उपहास के पात्र बन जाते हैं।

(3) **संस्कृत गद्यांश** – अस्मिन् काले दीनानाथशर्मणो गृहे मङ्गल-वाद्यध्वनिरुदतिष्ठत् । आम । ज्ञातम्, अद्य वासन्त्या विवाहोत्सव आसीत । अनवरतमन्तर्बहिः प्रविशता निर्गच्छता च जनसम्मर्देन समाकुलमासीद् दीनानाथ गृहद्वारम् । सर्वतः सम्प्रवृत्तेऽपि प्रमोद प्रवाहे वासन्त्याः पितरौ क्याचिद् वेदनयाऽऽक्रान्ताविवे दृश्यते स्म । अद्य विवाहोत्सवे वसन्तोनागत आसीत् न जाने स क्व पलायित आसीत् ।

हिंदी में अनुवाद —

उसी समय दीनानाथ के घर में मंगलवाद्य ध्वनि प्रारम्भ हुई तथा लोगों ने कहा हम जान गए। आज वासन्ती का विवाह है। इस प्रकार अन्दर बाहर आते-जाते लोगों से दीनानाथ का घर भरा हुआ था। सभी जगह आनन्द की लहर छाई हुई थी। परन्तु वासन्ती के पिता के अन्दर दुःख की लहर ही दिखाई दे रही थी। इस विवाह उत्सव में वसन्त नहीं आया था। इसी कारण से वे दुःखी थे कि न जाने वह कहां भाग गया था।

Printed at : Parivartan Press. Jalandhar.